ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 03 अप्रैल 2016 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 03 अप्रैल 2016 से 09 अप्रैल 2016

चै.कृ.–10 ● वि० सं०–2072 ● वर्ष 58, अंक 66, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,116 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

''उपसभा, पंजाब के तत्त्वावधान में हुआ महर्षि दयानंद सरस्वती के जन्मोत्सव एवं बोधोत्सव का भव्य आयोजन''

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पंजाब द्वारा महर्षि दयानंद सरस्वती के जन्मोत्सव व ऋषिबोधोत्सव का आयोजन आर्य समाज लोहगढ़, अमृतसर में किया गया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पंजाब के मंत्री प्रिंसीपल श्री जे.पी. शूर जी एवं प्रधान डा. श्रीमती नीलम कामरा की अध्यक्षता में महर्षि दयानंद सरस्वती के वैचारिक आलोक से जनमानस को आलोकित करने हेतु इस आयोजन में श्री एस. के. शर्मा सचिव, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा एवं निदेशक प्रकाश विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति, नई दिल्ली, उपस्थित थे। स्वामी सूर्य देव जी बठिंडा से आशीर्वाद देने पधारे। स्वामी करुणा आनंद जी कुरुक्षेत्र से एवं स्वामी मधुरा नंदा अमृतसर से विशेष रूप से उपस्थित थीं।

कार्यक्रम का शुभारम्भ वैदिक हवन यज्ञ से हुआ। वैदिक मंत्रोच्चारण से एवं हवन सामग्री की सुगन्धि से समस्त वातावरण पावनता से परिपूर्ण हो गया। प्रिंसीपल श्री जे.पी. शूर जी ने अतिथिगणों का स्वागत करते हुए अपने उद्बोधन में कहा कि आज डी.ए.वी. व आर्य समाज संस्थाओं का यही लक्ष्य है कि स्वामी दयानंद जी के सपनों को साकार करने के लिए युवाओं को प्रेरित कर के देश को प्रगति पथ पर अग्रसर करें।

शिक्षकगणों ने वैदिक भजन 'स्वामी दयानंद के हम सेनानी' प्रस्तुत कर उपस्थित जनो को मंत्र मुग्ध कर दिया।

श्री एस. के. शर्मा ने उपस्थिति को सम्बोधित करते हुए कहा आज की परिस्थिति में ऋषि दयानन्द के विचारों की अत्यन्त प्रासंगिकता हो गई है। आज जरूरत इस बात की है कि हम मात्र जानकारियों से उठ कर ज्ञान की और बढ़ें ताकि ऋषि के विचाराधारा को सही परिप्रेक्ष्य में हृदयंगम करके स्वयं उस पर आचरण करें और समाज में उसका प्रचार करें। स्वामी दयानंद सरस्वती एवं आर्य उन्होंने कहा कि और आज प्रधान जी के माध्यम से हम सभी आर्य समाज और डी.ए.वी. संस्थाओं के लोग स्वामी दयानंद जी से जुड़े हुए है। क्योंकि आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के प्रधान 'आर्यरत्न' श्री पूनम सूरी जी के परदादा जी का सीधा सबंध स्वामी दयानंद जी से था।

श्री अरविंद घई जी ने अपने उद्बोधन में उपस्थिति को स्वामी दयानंद जी की शिक्षाओं का पालन करने व श्रेष्ठ आर्य बनने की प्रेरणा दी।

स्वामी करुणानंद जी ने अपने विचारों की वृष्टि करते हुए कहा कि वैदिक मंत्रों से मानसिक विकारों की शुद्धि होती है और हवन यज्ञ में होम की गई सामग्री वातावरण की अशुद्धियाँ दूर करती है। इससे कई प्रकार के रोगों के कीटाणु नष्ट होते हैं। इसलिए हम सब को अपने घरों में नियमित रूप से हवन का आयोजन करना चाहिए।

स्वामी सूर्य देव जी ने बताया कि आर्य समाज की स्थापना से पूर्व हमारा देश अनेक प्रकार की कुरीतियों एवं रूढ़ियों से ग्रस्त था। स्वामी दयानंद जी ने सभी शृंखलाओं को तोड़ा और आर्य समाज की स्थापना कर लोगों को आर्य अर्थात श्रेष्ठ मानव बनने की प्रेरणा दी।

स्वामी मधुरानंदा जी ने उपस्थिति को महर्षि दयानंद जी की शिक्षाओं पर चलने की प्रेरणा दी। डा. श्रीमती नीलम कामरा ने आर्यजनों का आभार व्यक्त करते हुए कहा कि यदि सब लोग स्वामी दयानंद सरस्वती जी के विचारों को अपने जीवन में धारण कर लें तो दिन–प्रतिदिन बढ़ता अनाचार, अनैतिकता एवं स्वार्थ परता समाप्त हो सकते हैं।

इस पावन अवसर पर पर्यावरण सुरक्षा का संदेश देने हेतु पौधे वितरित जरूरत मंद महिलाओं को सिलाई मशीनें वितरित की गईं ताकि वे आत्मनिर्भर होकर अपने परिवार का पालन सकें। असहायवर्ग के बच्चों को यूनीफॉर्म दी गई। निर्धन वर्ग की सहायतार्थ राशन भी वितरित किया गया। इस अवसर पर श्री विजयमहक, श्री नेरन्द्र कुमार एवं कुमारी मीना द्वारा सुन्दर वैदिक भजन प्रस्तुत किए गए।

इस पावन आयोजन में श्री बी. के. मित्तल, श्री अरविन्दघई, श्री जे. के. लूथरा, एडवोकेट सुदर्शन कपूर, डा. वी.पी. लखनपाल, श्री कुंदनलाल अग्रवाल, श्री जगदीशराजसहानी, एम. एल. ए. बटाला, डा. अरविंद, श्रीमती पी. पी. शर्मा, डा. राजेश कुमार, डा. पुष्पिंदरवालिया, श्री राकेश मेहरा, श्री हीरालालकंधारी, श्री इन्द्रपाल आर्य, प्रिंसीपल अजयबेरी, डा. ए. के. पॉल, डा. के. एन. कौल, प्रिंसीपल विनोद कुमार, प्रिंसीपल अनीता मेनन, एडवोकेट कुँवर राजेन्द्र सिंह, समाज सेविका श्रीमती स्वराज ग्रोवर, प्रिंसीपल नीरा शर्मा, प्रिंसीपल अंजना गुप्ता, प्रिंसीपल संजीव कोछड़, प्रिंसीपल परमजीत कुमार, प्रिंसीपल अंजना गुप्ता, प्रिंसीपल वरिन्दर भाटिया, प्रिंसीपल राजीव भारती एवं विभिन्न डी.ए.वी. कॉलेजों व स्कूलों के प्रिंसीपल एवं समाज संस्थाओं के माननीय सदस्य भी उपस्थित थे।

कार्यक्रम का समापन शांति पाठ से हुआ।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

आर्य जगत्

सप्ताह रविवार 03 अप्रैल, 2016 से 09 अप्रैल, 2016

मनोबल, सत्य, यश, श्री

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

मनसः काममाकूतिं, वाचः सत्यमशीय।
पशूनां रूपमन्नस्य रसो, यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा।।

यजु ३९.४

ऋषिः **ब्रह्मा**। देवता **अग्निः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● **(मनसः)** मन की **(कामं)** इच्छा–शक्ति को [तथा] **(आकूतिं)** संकल्प–शक्ति को [और] **(वाचः)** वाणी के **(सत्यं)** सत्य को **(अशीय)** प्राप्त करूं। **(पशूनां)** पशुओं का **(रूपं)** रूप, **(अन्नस्य)** अन्न का **(रसः)** रस, **(यशः)** कीर्ति [और] **(श्रीः)** श्री **(मयि)** मुझमें **(श्रयतां)** स्थित हो। **(स्वाहा)** एतदर्थ आहुति देता हूं, सत्क्रिया करता हूं।

मैं चाहता हूं कि मैं एक उत्कृष्ट मानव बनूं, मेरे अन्दर विविध शक्तियाँ अपने पूर्णरूप में निवास करें। मेरे मन के अन्दर प्रबल इच्छा शक्ति (काम) और संकल्प शक्ति (आकूति) हो। मानव इच्छाएं करता रहता है, परन्तु वे पूर्ण नहीं होतीं, यह इच्छा शक्ति की दुर्बलता का चिन्ह है। योगी जन बताते हैं कि इच्छा शक्ति को बलवान् बना लेने पर मनुष्य जो इच्छा करता है वह पूर्ण होकर रहती है। वह इच्छा करता है कि अमुक पापी धर्मात्मा बन जाए, या अमुक रोगी का रोग दूर हो जाए, तो सचमुच वैसा ही हो जाता है। मन की दूसरी शक्ति संकल्प शक्ति है। संकल्प की दृढ़ता होने पर मनुष्य अपने व्रत से च्युत नहीं होता। जो व्रत एक बार धारण कर लेता है, अन्त तक उसका निर्वाह करता है। यदि वह संकल्प करता है कि मैं आज से ब्रह्मचारी रहूंगा, तो उस पर दृढ़ रहता है। यदि वह संकल्प करता है कि मैं आज से धूम्रपान करना छोड़ता हूं, तो सचमुच उसका यह व्यसन छूट जाता है। इसके विपरीत जिनमें संकल्प शक्ति की दृढ़ता नहीं होती, वे नित्य नवीन–नवीन संकल्प करते हैं, और किसी न किसी बहाने उन्हें तोड़ते रहते हैं।

मेरी यह भी कामना है कि मेरी वाणी में सत्य हो। वाणी में सत्य तभी आ सकता है, यदि मन में भी सत्य हो। यदि मन में सत्य होगा, तो वह कर्म में भी आयेगा। इस प्रकार मनसा, वाचा, कर्मणा मैं सत्यमय हो जाऊं, यह मेरी आन्तरिक अभिलाषा है। पतंजलि मुनि ने कहा है कि जिसके अन्दर सत्य प्रतिष्ठित हो जाता है, उसे क्रिया–फलाश्रयत्व प्राप्त हो जाता है, उसकी वाणी अमोघ हो जाती है। उसकी वाणी से दिये गये आशीर्वाद सत्य सिद्ध होते हैं। मेरी वाणी में भी यह दिव्य शक्ति आये।

मेरी यह भी अभिलाषा है कि मुझे गाय आदि दुधारू पशुओं का दूध यथेच्छ मात्रा में मिले, जिससे उसके सेवन से प्राप्त होनेवाला सौन्दर्य मुझमें आये। मुझे सात्त्विक अन्नों से मिलनेवाला रस–रक्त भी प्राप्त हो। मुझे धर्म और सत्कर्म से प्राप्त होनेवाली कीर्ति भी मिले और मेरी श्री, मेरी शोभा, दिग्दिगन्त में फैले। उक्त सब कामनाओं और आदर्शों की पूर्ति के लिए 'स्वाहा' हो, सत्क्रियाओं और सत्यप्रयासों की निरन्तर आहुति पड़ती रहे।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु - भक्ति

● महात्मा आनन्द स्वामी

मन की निर्मलता–जिससे एक काल में दो पदार्थों का ग्रहण और ज्ञान नहीं होता, उसको मन कहते हैं। जब यह पता लग गया कि मन तो एक समय में केवल एक ही काम कर सकता है, एक काल में एक ही विषय को ग्रहण करने की सामर्थ्य रखता है, एक क्षण में एक ही वस्तु का इसे ज्ञान हो सकता है, दो का नहीं। तो फिर इसे एक भगवान की ज्योति की ओर लगाने में कौन सी कठिनाई रह जायेगी? केवल एक बार बलपूर्वक प्रयत्न करने और हठ करने की आवश्यकता है।

मन को एक और ढंग से समझाया जा सकता है, जब उपासना में बैठें और मन उपासना को छोड़ कहीं और खिसकने लगे तब मन से कहो–अरे! तू कहाँ जाने लगा। तू तो नपुंसक है, स्त्री पुरुषों में जाने से तेरी हंसी होगी।

अब आगे...

उसके अपात्र

ईश्वर नाम अमूल्य है,
दामन बिना बिकाय।
तुलसी अचरज देखिये,
कोई ग्राहक न आय।।

निःसन्देह यह बहुत आश्चर्य है कि प्रभु–भक्ति पर कुछ भी तो व्यय नहीं होता और भगवान् का नाम बिना मूल्य के मिलता है, परन्तु फिर भी कोई खरीदार नहीं आता। इस आश्चर्य को देखकर तुलसीदास जी स्वयं ही इसका उत्तर देते हैं–

तुलसी पिछले पाप से,
हरिचर्चा न सुहाय।
जैसे ज्वर के वेग में,
भूख विदा हो जाय।।

जब मनुष्य ज्वर–ग्रस्त हो तो उसे अमृत–से–अमृत वस्तु भी अच्छी नहीं लगती। न दूध पीने को जी चाहता है, न कुछ खाने को। हाँ, किसी–किसी समय चटपटी चीजों के लिए जी ललचाता है परन्तु भूख फिर भी नहीं होती। इसी प्रकार जिन लोगों को पिछले जन्मों के पापों का ज्वर चढ़ा हुआ है, उन्हें प्रभु–चर्चा भली नहीं लगती। वे परमात्मा के नाम से भागते हैं। कुछ लोग तो परमात्मा का अस्तित्व ही नहीं मानते। ऐसे लोग वास्तविक रूप में रोगी हैं। उनका मन तथा आत्मा पाप–ग्रस्त हैं। इसीलिए तो उनका मन प्रभु–भजन में नहीं लगता। नाच–तमाशे, सिनेमा और इसी प्रकार की दूसरी चटपटी वस्तुओं पर ललचाता है और वे इन्हीं की ओर दौड़ते हैं। परन्तु वे नादान नहीं जानते कि ज्वर–ग्रस्त होते हुए वे रोग को भी बढ़ा रहे हैं। ऐसे लोग प्रभु को कभी पा भी सकेंगे? भारी सन्हेद होता है।

यजुर्वेद के 17 वें अध्याय का 31 वाँ मन्त्र इस विषय को बड़ा स्पष्ट करता है–कौन लोग प्रभु को नहीं पा सकते?

निम्नोक्त मन्त्र में इसका बहुत ही सुन्दर उत्तर दिया गया है–

न तं विदाथ यऽइमा
जजानान्यद्युष्माकमन्तरं बभूव।
नीहारेण प्रावृता जल्प्या वासुतृप
उक्थशासश्चरन्ति।।

"हे मनुष्यो, जैसे ब्रह्म के जाननेवाले पुरुष धूप के आकार कुहर के समान अज्ञानरूप अन्धकार से अच्छी प्रकार ढके हुए थोड़े सत्य–असत्य, वादानुवाद में स्थिर रहनेवाले, प्राणपोषक और योगाभ्यास को छोड़ शब्द–अर्थ–सम्बन्ध के खण्डन–मण्डन में रमण करते हुए विचरते हैं, वैसे ही तुम लोग उस परमात्मा को नहीं जानते हो। जो इन प्रजाओं को उत्पन्न करता और जो ब्रह्म तुम अधर्मी अज्ञानियों के सकाश से अर्थात् कार्य–कारण रूप में जगत् और जीवों से भिन्न तथा सभी में स्थिर भी दूरस्थ होता है, उस अति सूक्ष्म आत्मा के आत्मा को नहीं जानते हो।"

भगवान् को पा न सकनेवाले चार प्रकार के मनुष्यों का वर्णन उक्त वेदमन्त्र में किया गया है–

अज्ञानी–

पहले तो वे, जो अज्ञान–रूपी अन्धकार में कुहरे के समान ढके हुए हैं। निपट अज्ञानी लोग, जिन्हें किसी वस्तु का यथार्थ ज्ञान नहीं, जो पशुवत् जीवन व्यतीत करते हैं, जिन्होंने ज्ञान की अग्नि में अपनी बुद्धि को नहीं तपाया और न ही अपने जीवन का उद्देश्य जाना। जन्म ले लिया, पल गए, बड़े हुए, खाया–पीया और मर गए। बस, इतना ही जिनका जीवन है, और जो ज्ञान से शून्य हैं, ऐसे व्यक्तियों को प्रभु–दर्शन नहीं हो सकते।

जल्पी

दूसरे वे लोग भी प्रभु–दर्शन से वंचित रह जायेंगे जो (जल्प्या) जल्प करने वाले हैं अर्थात् थोड़े सत्य–असत्य, वादानुवाद में स्थिर रहनेवाले–कुछ अल्पज्ञान प्राप्त कर लिया और शब्दजाल में पड़कर लगे वाद–विवाद करने–ऐसे, जैसे चूहे को हल्दी

की गाँठ मिल जाय तो वह अपने–आप को पंसारी समझने लगे; ऐसे लोग भी जिनको पूरा ज्ञान नहीं या जो वाद–विवाद ही में पड़े रहते हैं, जिनका स्वाभाव केवल दूसरों की भाषा और वाणी के दोष निकालना हो जाता है, तत्त्व तक नहीं पहुँच सकते; केवल गृद्ध की तरह मांस पर मँडराया करते हैं। इनकी हंस–वृत्ति नहीं, अपितु काक–वृत्ति होती है। इनके भाग्य में ज्योति से भरपूर स्वर्ग में पहुँचकर प्रभु प्यारे को पाना नहीं लिखा।

असुतृप–

तीसरे वे लोग हैं, जिनको इस वेद–मंत्र में 'असुतृपः' कहा गया है। इन्हें प्राणपोषक व 'पेटू' भी कहा जा सकता है; अर्थात् तो विरोचन1–बुद्धिवाले हैं और यह समझते हैं कि यह शरीर ही सब–कुछ है, चाहे बेजबानों के गले काटने पड़ें, परन्तु इस शरीर की ज़बान का चस्का अवश्य पूरा होना चाहिए।

दोनों ने पूछा–"हे भगवन्! यह जो जलों में दीखता है और यह जो शीशे में दीखता है, यह कौन है?"

प्रजापति ने उत्तर दिया–"यही इनमें दीखता है। पानी के प्याले में तुम दोनों आत्मा (अपने–आप) को देखा, और जो कुछ तुम आत्मा (अपने–आप) को नहीं समझे हो, वह मुझे बताओ।" उन्होंने पानी के प्याले में देखो। तब प्रजापति ने उन्हें कहा–"क्या देखा तुमने?" उन्होंने कहा, "भगवन्! हम यह सम्पूर्ण आत्मा देख रहे हैं, रोम–रोम तक और नख–नख तक...अपनी पूरी छाया।"

प्रजापति ने उन्हें कहा–"अच्छे–अच्छे आभूषण और वस्त्र पहनकर तथा अपने आप को साफ़–सुथरा करके (बाल और नख काटकर) फिर पानी में देखो।"

उन दोनों ने वैसा ही किया। प्रजापति ने पूछा–"अब क्या देखते हो?" वे बोले–"जैसे हम अच्छे भूषण और वस्त्र धारण किए हुए और साफ़–सुथरे हैं, इसी प्रकार हे भगवन्, ये दोनों हमारे आत्मा (अर्थात्, प्रतिबिम्ब) हैं।" प्रजापति ने कहा–"आत्मा है, यह अमृत है, यह अभय है, वह ब्रह्म है।"

तब वे दोनों प्रसन्न–चित्त होकर चले गये।

उन दोनों का जाते देखकर प्रजापति ने कहा–'ये दोनों आत्मा को जाने और खोजे बिना जाते हैं। इन दोनों में से जो कोई देवता या असुर इस उपनिषद् (देह आत्मा है, इस सिद्धान्त) का अनुसरण करेंगे, वे नष्ट हो जाएँगे।'

अब विरोचन तो वैसा ही प्रसन्न–चित्त हुआ असुरों के पास पहुँचा और उसने कहा–"यह शरीर ही आत्मा है और यही सेवा के योग्य है। जो यहाँ आत्मा चाहे चोरी–मक्कारी करनी पड़े, परन्तु इस शरीर के पेट की कब्र भरनी ही चाहिए। दूसरे मरें या जिएँ, परन्तु मेरी देह को सब प्रकार का सुख मिलना चाहिए। धर्म, जाति, देश पड़े भाड़ में, मेरे शरीर के आराम के लिए मोटर, बँगले, वाटिका और नाना प्रकार के भोजन होने ही चाहिएँ। ऐसे पेटू लोगों का धर्म–ईमान केवल पेट रह जाता है। खाओ, पीओ और खाते–ही–खाते मर जाओ। एक बार रोम के लोग इसी प्रकार का जीवन व्यतीत करने लगे थे। वे खाते थे और जब पेट भर जाता था तो वमन कर देते, फिर खाते और वमन कर देते। वे इसी

(देह) को पूजता और उसकी सेवा करता है, वह दोनों लोकों का लाभ करता है।" किन्तु इन्द्र ने देवताओं के पास पहुँचने से पहल ही भय (दिक्कत) अनुभव किया–जब यह छाया (जो पानी में देखी) अर्थात् शरीर अच्छे भूषणों को धारता है तो अच्छे भूषणोंवाला हो जाता है, और जब अच्छे वस्त्रों को पहनता है तो अच्छे वस्त्रोंवाला हो जाता है। इसी प्रकार शरीर के अन्धा होने पर यह भी अन्धा हो जाता है, काना होने से काना होता है, लँगड़ा होने पर यह भी लँगड़ा हो जाता है। मुझे तो इस सिद्धान्त में कोई भलाई नहीं दीखती। यह विचारकर इन्द्र फिर प्रजापति के पास आया। प्रजापति ने उसे देखकर कहा–"इन्द्र! तुम शान्त–हृदय होकर विरोचन के साथ चले गये थे। किस प्रयोजन से तुम फिर आ गये हो?" इन्द्र ने अपनी वही शंका उनके सामने रख दी और कहा–"इस शरीर के नाश होने पर तो इसकी छाया नष्ट हो जाती है, इसलिए इस सिद्धान्त में मुझे भलाई नहीं दीखती।" प्रजापति ने कहा–"तूने ठीक समझा, क्योंकि छाया आत्मा नहीं है। अब मैं तुम्हें असली आत्मा का व्याख्यान करूँगा।" इसके पश्चात् प्रजापति ने स्वप्न में महिमा अनुभव करनेवाले को आत्मा बतलाया। इन्द्र ने इसपर भी आपत्ति की। तब प्रजापति ने सुषुप्ति–अवस्थावाले को आत्मा बतलाया। इन्द्र ने फिर भी मीन–मेख निकाली तो प्रजापति ने देखा कि यह तो सचमुच असली आत्मा को देखे बिना नहीं टलेगा। इसलिए इन्द्र को उपदेश दिया–"यह शरीर मरनेवाला है, जो मृत्यु से जकड़ा हुआ है। यह इस अमर और अशरीर आत्मा का अधिष्ठान (रहने की जगह) में शरीर का सुख समझ बैठे थे। ऐसे लोगों ने जीवन का ध्येय केवल खाना ही समझ रखा है; वे जीते ही खाने के लिए हैं। फ़ारसी के एक कवि ने कहा है–

खुरदन बराय ज़ीस्तनो ज़िकर करदन अस्त।
तो मोतकिद की ज़ीस्तन अज़बहरे खुरदन अस्त।।

अर्थात् "खाना जीवित रहने और भगवान् का भजन करने के लिए है परन्तु तेरा यह विश्वास है कि जीवन खाने ही के लिए बनाया है।" ऐसे ही लोग असुतृपः हैं। वे कदापि प्रभु–भजन में मन को नहीं लगा सकते। वे तो केवल शरीर की भिन्न–भिन्न इन्द्रियों की सन्तुष्टि में लगे रहते हैं, किसी के लिए अच्छे दृश्य ला, किसी के लिए सिनेमा का प्रबन्ध कर, किसी ने और ही इच्छा प्रकट कर दी, असुतृपः लोग इन्हीं के नौकर बनकर सारा जीवन बैल, कुत्ते और उल्लू की भाँति व्यतीत कर देते हैं। इसका यह प्रयोजन नहीं कि शरीर की ओर ध्यान ही नहीं देना चाहिए। नहीं, ध्यान अवश्य देना चाहिए। आत्मा के निवास–स्थान की ओर ध्यान न देंगे तो और किसकी ओर देंगे! परन्तु इसे निवास–स्थान ही समझना चाहिए, आत्मा नहीं। गीता में कृष्ण भगवान् ने बहुत सुन्दरता से बतलाया है–

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।

"युक्त आहार और युक्त ही विहार, इसी प्रकार युक्त ही चेष्टा और कर्म करनेवाले और युक्त ही सोने और जागनेवाले योग को सिद्ध कर सकते हैं।"

युक्त का प्रयोजन है उचित, मुनासिब। कुछ लोग मर्यादा में रहकर खाते हैं–न इतना कम कि शरीर निर्बल ही होता चला जाय और न इतना अधिक ही कि खाने के सिवा और कुछ सूझे ही नहीं। शरीर–रक्षा के लिए जितना खाना आवश्यक है, उतना खाना चाहिए, न कम न अधिक। इसी प्रकार काम भी मर्यादा से करना चाहिए। सोने और जागने के विषय में भी "युक्त" के सिद्धान्त को सामने रखना चाहिए और चेष्टा भी अपनी शक्ति और अपनी अवस्था के अनुसार ही करनी चाहिए; तभी ये चेष्टाएँ पूर्ण हो सकती हैं। इस प्रकार से जो लोग अपना जीवन बना लेते हैं, निश्चय ही वे योग ही करते हैं, और ऐसे ही लोग प्रभु के साथ योग करने के अधिकारी बनते हैं। जब तक यह शरीर के साथ एक हो रहा है, शरीर में आत्माभिमान रखता है, यह प्रिय और अप्रिय (हर्ष–शोक) से जकड़ा हुआ है। पर जब यह शरीर से अपने–आप को अलग समझता है, तब इसको प्रिय और अप्रिय नहीं छूते।"

पूरी कथा के लिए छान्दोग्य उपनिषद् के आठवें प्रपाठक का सातवाँ, आठवाँ, नवाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ, बारहवाँ खण्ड पढ़िये। हैं। जो अपना उद्देश्य केवल पेट–पूजा ही मानते हैं उनके लिए तुलसीदास जी कहते हैं–

भजन करन को आलसी,
भोजन को तय्यार।
तुलसी ऐसे जनन पर,
बार–बार धिक्कार।।

तो ऐसे लोग भी प्रभु के प्रेम–पात्र नहीं बन सकते।

उक्थशास–

वेद–आज्ञा के अनुसार भगवान् को न पा सकनेवाले वेद की भाषा में "उक्थशास" कहलाते हैं। योगिराज भगवान् दयानन्द ने इसका यह भाव लिखा है–"योगाभ्यास को छोड़कर शब्द, अर्थ, सम्बन्ध के खण्डन–मण्डन में रमण करनेवाले।" जो लोग पढ़ तो बहुत गये हैं, ज्ञान भी सारा प्राप्त कर लिया, शास्त्रर्थ करने में भी बेजोड़ हैं, किन्तु प्रभु–चरणों में जिनकी लगन नहीं है, केवल शब्दजाल में और व्याकरण के गोरखधन्धे में फँसे हैं, और अर्थों के बखेड़े ही से फ़ुरसत नही मिलती, ऐसे लोग भी प्रभु को पाने में असमर्थ रहते हैं। ऐसे लोगों को यदि "झगड़ालू" का नाम दे दिया जाय तो अनुपयुक्त न होगा। जिनका स्वभाव झगड़ालू हो गया है, भाषा कड़वी हो गई, वाणी में मिठास नहीं रही, किसी से बात करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि अभी काट खायेंगे, उनकी मनोवृत्ति प्रभु–भक्ति की ओर प्रवृत्त नहीं हो सकती। इस वेद–मन्त्र के अनुसार जो लोग अज्ञानी हैं, जो लोग अल्पज्ञान रखनेवाले और अभिमानी हैं, जो लोग असुतृपः या पेटू अर्थात् विरोचन बुद्धि–वाले हैं, और जो लोग ज्ञानी होते हुए भी झगड़ालू हैं, ऐसे लोग प्रभु–दर्शनों से वंचित ही रहते हैं।

1. विरोचन–बुद्धि वे लोग हैं, जो शरीर ही को आत्मा समझकर इसी की पूजा में रहते हैं। इस सम्बन्ध में एक बड़ी रोचक कथा छान्दोग्य उपनिषद् में आती है–

प्रजापति ने कहा–"आत्मा जो कि पाप से अलग है, जरा और मृत्यु से परे है, शोक से दूर है, भूख और प्यास से अलग है, जो सच्ची कामनाओंवाला और सच्चे संकल्पोंवाला है, उसका अन्वेषण करना चाहिए, उसकी तलाश करनी चाहिए। जो इस आत्मा को ढूँढ़कर जान लेता है, वह सारे लोकों को, सारी कामनाओं को पा लेता है।" प्रजापति के इन शब्दों को देवता और दैत्य दोनों ने सुना और उन्होंने कहा–"हमें उस आत्मा का अन्वेषण करना चाहिए जिस आत्मा को ढूँढ़कर पुरुष सारे लोकों और सारी कामनाओं को पा लेता है।" यह निश्चय कर देवताओं में से इन्द्र और असुरों में से विरोचन, दोनों प्रजापति के पास गए। प्रजापति ने दोनों के आने का कारण पूछा। दोनों ने कहा, "आपके इस वचन का ढिंढोरा दुनिया में पिट रहा है कि आत्मा की खोज करनी चाहिए। सो हम दोनों उसी की खोज में आपके पास आए हैं।" प्रजापति ने उन दोनों को कहा–"यह जो आँख में पुरुष दीखता है यही है वह आत्मा, यही है जो मैंने कहा था। यह अमृत है, यह अभय है, यह ब्रह्म है।"

क्रमशः....

प्रजापति ने उत्तर दिया–"यही इनमें दीखता है। पानी के प्याले में तुम दोनों आत्मा (अपने–आप) को देखा, और जो कुछ तुम आत्मा (अपने–आप) को नहीं समझे हो, वह मुझे बताओ।" उन्होंने पानी के प्याले में देखो। तब प्रजापति ने उन्हें कहा–"क्या देखा तुमने?" उन्होंने कहा, "भगवन्! हम यह सम्पूर्ण आत्मा देख रहे हैं, रोम–रोम तक और नख–नख तक...अपनी पूरी छाया।"

योग और आत्मविश्वास

● भद्रसेन

योगाभ्यास आत्मिक प्रगति का परम साधन है, और आत्मिक प्रगति की पहचान आत्म विश्वास ही है। अतः जिस भी क्रिया, व्यवहार बात एवं भाव से आत्म विश्वास और आत्म सम्मान का अनुभव हो, वही आत्मविश्वास का एकमात्र पथ कहा जा सकता है। आत्मिक उन्नति के लिए योग की तरह आत्मविश्वास और आत्म सम्मान की भावना अत्यन्त सहायक है। वस्तुतः आत्म विश्वास ही आत्मिक प्रगति की कसौटी है, परन्तु जिस भी स्थिति में या जिस से आत्महीनता, आत्मग्लानि, अपमान का अनुभव हो, वह आत्मिक उन्नति के लिए घातक बात है और वस्तुतः आत्महत्या इसी का नाम है। तभी तो कहा है– 'नात्मानमवमन्येत्' (मनु. 4,137)= किसी भी स्थिति में और किसी भी प्रकार के व्यवहार से अपने आपे का अपमान न करे, क्योंकि – 'मनस्वी म्रियते कामं कार्पण्यं न तु गच्छति' विचारशील चाहे मर जाए, पर आत्म–विश्वास आत्मसम्मान की रक्षा करता है और सर कलम करवा कर के भी वह अपने आत्मविश्वास को बचाता है=प्राण ादपि प्रत्ययो रक्षितव्यः। इसी भावना से ही अर्जुन को सजग करते हुए श्रीकृष्ण जी ने कहा था–

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥गीता 65॥

आत्मविश्वास और आत्मसम्मान की भावना से सदा अपने आपको उभारे, कभी भी किसी प्रकार से आत्महीनता द्वारा अपने आपको धिक्कारे नहीं, क्योंकि आत्म विश्वास से उभरा हुआ आत्मा ही अपना सबसे बड़ा मित्र, सहायक है और आत्महीनता में डूबा हुआ अपना आपा ही अपना सबसे बड़ा शत्रु है।

अपने आपको धिक्कारना ही आत्महीनता है। कई बार अपने को जहा, अकर्मण्य, निखट्टू, सबसे पिछड़ा हुआ, असमर्थ समझकर अपने आप में आत्महीनता लाई जाती है, वहां कई बार निम्नलिखित व्यवहार करके हम अपने अन्दर आत्महीनता को उभारते हैं। अतः इनसे सदा बचने का प्रयास करना चाहिए। जैसे कि

1. जब कोई महत्त्वाकांक्षा को छोड़ बैठता है, तो वह धीरे–धीरे अपने आप को आत्महीनता की ओर धकेलता है।
2. जब कोई पतितों के सामने झुक कर चलता है, क्योंकि आत्म विश्वास से हीन व्यक्ति अपने व्यवहार की निस्सारता को नहीं जानता (=न हि गणयति क्षुद्रो जन्तुः परिग्रहफल्गुताम् नीति. 9)
3. जब कोई कठिन कामों से जी चुरा कर सरल कार्य खोजता है।
4. जब कोई अपराध करके अपने आप को सन्तोष देने के लिए सोचने लगे, कि दूसरे भी ऐसा ही करते हैं।
5. जब कोई अपनी दुर्बलता के कारण किसी के अत्याचार को सहन करके फिर यह सोचने लगे, कि सन्तोष और शान्ति धारण करना ही गुण है।
6. जब कोई किसी कुरूप से घृणा करता है।
7. जब कोई व्यक्ति कर्मफल व्यवस्था को स्वीकार करते हुए, यह मानते हुए, कि जब कोई जैसा कर्म करता है, तभी वह वैसा फल प्राप्त करता है, पुनरपि यह सोचकर सन्तोष कर लेना, कि जैसी परमात्मा की मर्जी। ऐसे ही किसी अवतार आदि के आधार पर संतरण की इच्छा करना अर्थात अपने कर्म या अपने आप पर भरोसा न करना आत्महीनता की ही पहचान है।

ऐसे ही पाप माफी की इच्छा से (न कि हृदय शुद्धि के लिए) विविध प्रकार के धार्मिक पूजा–पाठ, जप–तप, यज्ञ, तीर्थयात्रा, देवदर्शन आदि का अनुष्ठान करना। यह सब आत्मविश्वास से दूर भागने वाली बात है, क्योंकि वह अपने किए के फल भोगने से बचने वाली चेष्टा ही है।

8. कर्म फल व्यवस्था पर विश्वास रखते हुए भी किसी ढंग से बेईमानी करना आत्मविश्वास की कमी को दर्शाना है।
9. किसी कार्य की सिद्धि के लिए रिश्वत या अन्य किसी का अवैध सहारा खोजना आत्म विश्वास के स्थान पर आत्महीनता का प्रदर्शन करना है।

आत्मविश्वास सफलता का प्रबल साधन है, तभी तो कहते हैं– 'आत्मना विन्दते वीर्यम्' केन. 2,8 आत्मविश्वास से साहस, धैर्य, शक्ति और बल की उपलब्धि होती है। इसी भाव की अभिव्यक्ति के लिए आम–बोल–चाल की भाषा में दिल शब्द का प्रयोग किया जाता है। जैसे कि–

दिल के साथ ही हैं,
जमाने की रौनकें।
जब दिल ही बुझ गया,
रौनकों को क्या करे कोई।।
मुश्किलें दिल के इरादे आजमाती हैं।
स्वप्न के पर्दे निगाहों से हटाती हैं।।
हार न मान गिर कर ऐ मानव,
ठोकरें ही इन्सान को जीना सिखाती हैं।

जीवन संघर्ष में जब कोई निराश हो जाता है, तो कहते हैं, कि उसका दिल टूट गया। यहां दिल शब्द साहस, धैर्य, उत्साह का प्रतीक है। जीवन संघर्ष में विजय, सफलता प्राप्त करने का आत्म विश्वास एक उत्कृष्ट सम्बल है। आत्मविश्वास की स्थिति में व्यक्ति एक स्वाभाविक आनन्द अनुभव करता है, जिस की तुलना सांसारिक सुख नहीं कर सकते हैं।

अध्यात्मरतिरासीनो निरपेक्षो निरामिषः।
आत्मनैव सहायेन यश्चरेत् स सुखी भवेत्।।
महा.शा. 330,30
समाधिर्निर्धौतमलस्य चेतसो
निवेशितस्यात्मनि यत्सुखं भवेत्।
न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा स्वयं तदन्तः करणेन गृह्यते।।
मैत्रायणी उप. 6,34

जीवन संघर्ष में वे व्यक्ति ही सफल होते हैं, जो आत्मविश्वासी होते हैं। अन्य साधारण सी कठिनता, बाधा, अड़चन, कष्ट आने पर भाग खड़े होते हैं। इसीलिए कहते हैं–अपना आपा (आत्मविश्वास) अपना सब से बड़ा सहायक है (=आत्मैव–आत्मनो बन्धुः)। यदि किसी कारण से मित्र, पारिवारिक जन या रिश्तेदार नाराज हो जाते हैं, तो तब तक कोई चिन्ता की बात नहीं, जब तक अपना आत्मविश्वास स्थिर है। हां, उस समय सबसे बड़ी चिन्ता की बात उपस्थित हो जाती है, जब अपना आपा अपना साथ न दे। आत्म विश्वास और आत्माभिमान दोनों अलग–अलग चीजें हैं। आत्मविश्वासी शुद्ध, आत्मनिर्भर और अभिमानी इससे विपरीत होता है। उत्क्राम महते सौभगाय यजु.11, 21=अपनी प्रगति के लिए आगे बढ़ और बराबर वालों से आगे निकल [=आप्नुहिश्रेयां समति समं क्राम अथर्व 5,30,7] अहमिन्द्रो न पराजिग्ये ऋ. 10,48,5= मैं शक्ति का पुञ्ज हूं, अतः हिम्मत नहीं हारता। स्वयं वाजिंस्तन्वं कल्पयस्व [य. 23,15] ऐसे आत्मविश्वास उभारने वाले वचनों का मनन एक अनोखी औषधि है। आत्मविश्वासी पन्ना धाई ने बालक उदय सिंह की विपरीत परिस्थितियों में रक्षा की।

182, शालीमार नगर,
होशियारपुर 146001

साम्प्रदायिक समरसता का सवाल

● डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

अपना देश भारत राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय समस्याओं से जूझ रहा है। पड़ोसी देश पाकिस्तान छद्मयुद्ध लड़ रहा है। भारत के सेक्युलर कहे जाने वाले नेता और बुद्धिजीवी तथा वामपथी यह कह रहे हैं कि भारतीय सरकार असहिष्णुता को बढ़ावा दे रही है। इनकी दृष्टि में मुस्लिम साम्प्रदायिकता का विरोध करना असहिष्णुता है। हिन्दू सदा से उदार रहा है और उसे हमेशा उदार रहना चाहिए। मुस्लिमों से उदारता की अपेक्षा करना ठीक नहीं है। वे तो हमेशा से कट्टर रहे हैं अतः उनकी साम्प्रदायिक कट्टरता का विरोध करना अनुचित है। कोलकाता के लिटरेचर फेस्ट में एक फिल्मी लेखक ने खुलेआम स्वीकार किया कि हम मंदिरो में जाकर देवी–देवताओं पर हास्य–व्यंग्य कर लेते थे और लोग बुरा नहीं मानते थे, मगर अब वहां भी कट्टरता आ गई है, यानी मस्जिदें कट्टर रहें, मगर मंदिर 'सहना सिंह' बने रहे, मंदिरों ने प्रतिवाद करना शुरू कर दिया है, यह असहिष्णुता की हद है।

वस्तुतः 125 करोड़ लोगों के देश में एकाध छिट–पुट घटनाओं से कोई निष्कर्ष निकाल लेना ठीक नहीं है, हम तो यह चाहते हैं कि हिन्दू बिल्कुल कट्टर न बनें, मुसलमानों की कट्टरता के बावजूद भी हिन्दू उदार ही बने रहें, किन्तु मुस्लिमों की कट्टरता को दूर करने का प्रयास मुस्लिम, हिन्दू सभी मिलकर करें। अपने को सेक्यूलर कहने वाले नेताओं–बुद्धिजीवियों तथा वामपथियों की यह खास जिम्मेदारी बनती है कि वे हिन्दू–मुस्लिम–कट्टरता का भेदभाव किये बिना सभी प्रकार की कट्टरताओं को खत्म करने का प्रयास करें। एक की कट्टरता दूसरे की कट्टरता को बढ़ावा देती है। अतः हिन्दू या मुस्लिम सम्प्रदाय की कट्टरता के मूल कारणों का अनुसन्धान करना चाहिए, उस पर संवाद और सार्थक बहस होना चाहिए। क्या हिन्दू धर्मशास्त्रों में गैर हिन्दुओं के लिए कुछ अनुचित बातें कही गई हैं? यदि ऐसा है तो उसे सामने लाना चाहिए, उन बातों के सन्दर्भ क्या हैं? उन पर हिन्दू धर्माचार्य आज क्या कह रहे हैं? आज के सन्दर्भ में उन वचनों की पुनर्व्याख्या क्या हो सकती है? इसी प्रकार मुस्लिम धर्मशास्त्रों में गैर मुस्लिमों के प्रति क्या वचन हैं? उन कथनों का उस समय क्या भाव था? आज उनका क्या अर्थ होना चाहिए, यह इस्लाम मजहब के विद्वान मौलानाओं को सोचना है। यह कार्य दुनिया के सभी देशों में जहाँ भी विभिन्न धर्मावलम्बी रहते हैं, होना चाहिए। अन्य देश ऐसा न कर सकें तो भी भारत के सभी धर्मगुरुओं को इस पर विचार करना चाहिए और अपने धर्मानुयायियों को साम्प्रदायिक समरसता का सौहार्द बनाये रखने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

संस्कृत भाषा में दो न्याय प्रचलित हैं–

(1) क्षीरनीरन्याय– इस न्याय का अर्थ है दूध और पानी का दृष्टान्त। जब दूध और पानी मिल जाते हैं तब यह जानना दुष्कर होता है कि उसमें दूध या पानी कितना और कहाँ है।

(2) तिलतण्डुलन्याय– तिल और चावल का दृष्टान्त। अर्थात् एक जगह रहते हुए भी अपना पार्थक्य बनाये रखना अर्थात् समरसता का अभाव।

शेष पृष्ठ 05 पर ☞

उत्कृष्ट शंका समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका:–लोग कहते हैं कि आत्मा ही परमात्मा है। और वही लोग कहते हैं, कि ईश्वर एक है। तो जब ईश्वर एक है, तो आत्मा में कैसे आ सकता है? आत्मा तो अनेक हैं। तो आत्मा, परमात्मा कैसे हैं, क्या परमात्मा खंडित–खंडित है?

समाधान– आत्मा और परमात्मा एक नहीं है। आत्मा अलग चीज है, परमात्मा अलग चीज है। परमात्मा एक है, और आत्मायें तो अनके हैं, असंख्य हैं। हम तो गिन भी नहीं सकते हैं। ईश्वर तो गिन सकता है, कि कितनी आत्मायें हैं। आत्मा का टोटल नम्बर (कुल संख्या) ईश्वर को पता है। हमको नहीं पता है। आत्माओं की इतनी अधिक संख्या है, कि हम दिमाग लगायेंगे, तो भी फेल हो जायेंगे। हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

ईश्वर और आत्मा दोनों अलग–अगल चीजें हैं, दोनों में अंतर है। कैसे अंतर है? इलेक्ट्रान और प्रोटॉन में अंतर है या नहीं? है यह कैसे पता चला? उनकी प्रॉपर्टीज (गुणधर्म) से। इलेक्ट्रान में निगेटिव चार्ज है, और प्रोटॉन में पोजिटिव चार्ज है। उसकी प्रोपर्टीज से पता लगता है, कि इलेक्ट्रान अलग चीज है, प्रोटॉन अलग चीज है। इसी तरह से आत्मा और ईश्वर इन दोनों की प्रॉपर्टीज भी अलग–अलग हैं। इनकी प्रोपर्टीज से पता लगता है कि ईश्वर अलग है, आत्मा अलग है। क्या अंतर हैं इनकी प्रॉपर्टीज में।

सोचिये, क्या ईश्वर कभी दु:खी होता है? नहीं और आत्मा तो रोज दु:खी रहता है। इससे पता लगा दोनों अलग–अलग हैं। ईश्वर सर्वव्यापक है, क्या जीवात्मा सर्वव्यापक है? नहीं। जीवात्मा एक स्थान पर रहता है। ईश्वर को सब कुछ मालूम है, क्या जीवात्मा को सब कुछ मालूम है? नहीं मालूम। जीवात्मा घोटाले करता है, क्या ईश्वर भी घोटाले करता है। यहां तो रोज अखबारों में घोटाले पढ़ते हैं। कोई चार सौ करोड़ खा गया, कोई नौ सौ करोड़ खा गया, कोई पन्द्रह हजार करोड़ खा गया। इसलिए जब दोनों की प्रॉपर्टीज अलग–अलग हैं, तो दोनों चीजें अलग–अगल हैं। ईश्वर अलग है, आत्मा अलग है।

ईश्वर एक है, और वो अखंड तत्त्व है। वो टुकड़े–टुकड़े नहीं है। जीवात्माएं अलग–अलग हैं। एक–एक आत्मायें भी स्वतंत्रता पूर्वक अखंड हैं। आत्मा भी कोई टुकड़ों (पार्टीकल्स) का कॉमबीनेशन नहीं है, खंडों का समुदाय नहीं है। वो भी एक तत्त्व है। लेकिन आत्मा बहुत छोटा है, और ईश्वर बहुत बड़ा है। ईश्वर पूरे ब्रह्माण्ड में और उससे भी बाहर, बहुत दूर–दूर तक फैला हुआ है। इस प्रकार दोनों अलग–अलग हैं।

शंका:–एक समय में एक ही प्रकार का प्राणायाम करना चाहिए। जैसे बाहय प्राणायाम या आभ्यन्तर–प्राणायाम। दो या तीन प्रकार के प्राणायाम एक साथ क्यों नहीं करना चाहिए? क्या ऐसा करने से कोई हानि है?

समाधान– हाँ ऐसा करने से हानि हो सकती है। एक समय में एक ही प्रकार का प्राणायाम करना चाहिए। यदि आपने बाह्य प्राणायाम किया, तो केवल बाह्य प्राणायाम ही करें। दो, तीन, चार, पांच, सात जितने भी करें, बाह्य प्राणायाम ही करें। फिर शाम को उपासना में आप दूसरा बदल सकते हैं। शाम को दो, तीन, चार, पांच आभ्यंतर प्राणायाम कर लें। एक ही समय की उपासना में दो बाह्य कर लिए, तीन आभ्यन्तर कर लिए ऐसा न करें।

शंका:–मन एक जड़ पदार्थ है। तो मन, शरीर में किस जगह पर रहता है, और मन को कैसे पकड़ा जाए?

समाधान– रात्रि में जो हम शयनकालीन मंत्र पढ़ते हैं,...(30.04) उन मंत्रों में एक शब्द आता है हृत्प्रतिष्ठम्। अंतिम छठे मंत्र में आता है न। ... तो उससे पता लगता है, कि मन, हृदय में रहता है। वो विद्वान लोग कहते हैं, कि हृदय दो तरह का है। एक छाती में है, एक सर में है। तो अपने चिंतन से, व्यवहार से, सामान्य स्वभाव से हमको ऐसा लगता है कि मन मस्तिष्क वाले हृदय में रहना चाहिए। क्यों रहना चाहिए? मन का काम है–संकल्प–विकल्प, विचार करना। जो हम विचार करते हैं, वो तो मस्तिष्क से ही करते हैं। मन का जो कार्य है विचार करना। विचार करने में जो स्थूल शरीर का भाग है, वो ब्रेन (दिमाग) ही है। इसी से हम विचार करते हैं। आज की मेडीकल साइंस भी यही कहती है। इससे लगता है कि मन–मस्तिष्क में रहना चाहिए।

अगला प्रश्न है– उसको पकड़ें कैसे? आंख बंद कर के बैठो और अपने मन के विचारों को पकड़ो। मेरे मन में कौन सा विचार आ रहा है? वस्तुत: आ नहीं रहा है, हम ही ला रहे हैं। हम कौन सा विचार ला रहे हैं। हम खाने–पीने का विचार ला रहे हैं, घूमने–फिरने का विचार ला रहे हैं, उस विचार को पकड़ लीजिए, बस मन पकड़ में आ गया। गाय के गले में रस्सी बंधी है। अगर गले की रस्सी पकड़ में आ जाए, तो गाय पकड़ में आ गई न। मन का काम क्या है–विचार करना। बाल्टी की तरह पकड़ में नहीं आयेगा वो। विचारों से ही पकड़ में आयेगा। विचारों को पकड़िये, मन आ गया हाथ में।

शंका:–इस जन्म में मांस और शराब बुरा समझते हुए हम नहीं खाते हैं या इन्हें बुरा मानकर खाना छोड़ दिया है। अगले जन्म में खाना–पीना नहीं चाहते, क्या ऐसा होगा?

समाधान– हाँ बिल्कुल हो जाएगा, आप इस जन्म में नहीं खाते और संकल्प भी करते हैं कि यह बहुत बुरी चीज है, हम आगे भी नहीं खायेंगे तो अगले जन्म में आप नहीं खायेंगे। आपके खाने–पीने के संस्कार बनेंगे ही नहीं। और जो पहले कभी थोड़ा–बहुत खाया भी हो, तो अब उसका आपने प्रायश्चित् कर लिया, और पक्का संकल्प कर लिया कि जो खा लिया, सो खा लिया, वो तो गलती हो गई। अब ऐसी गलती आगे नहीं करेंगे। तो आगे योगदर्शन में एक शब्द लिखा है, दग्धबीज करना–जिस कार्य को दोबारा करने की इच्छा कभी भी न हो, उसको बोलते हैं–दग्धबीज। तो इस जन्म में तो शायद आप नहीं खायेंगे। बस बात खत्म हो गई। आपको कोई जबर्दस्ती खिलाये तो भी नहीं खायेंगे। संस्कार अभी तो दग्धबीज जैसा ही हो गया। और यदि बिल्कुल कभी भी इच्छा नहीं होगी खाने की, तो इस कारण से संस्कार दग्धबीज हो गया।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ (गुजरात)

☞ *पृष्ठ 04 का शेष*

साम्प्रदायिक समरसता ...

प्रथम क्षीरनीरन्याय का उदाहरण है भारत में हिन्दुओं और पारसी धर्मावलम्बियों का सामञ्जस्य। पारसी धर्मावलम्बी जब अपने निवास स्थान ईरान (पारस) से अरब धर्मयोद्धाओं से संत्रस्त होकर भारत के पश्चिमी समुद्र तट पर आये और वहाँ के राजा से शरण माँगी तो उस भारतीय राजा ने उनका स्वागत करते हुए कहा था कि आपका स्वागत है। आप हमारे समाज में दूध और पानी की तरह घुल–मिल जाइए। पारसियों ने अक्षरश: वही किया और वे पृथक् धर्म के अनुयायी होते हुए भी भारतीय समाज (जनता) के अभिन्न अंग बने हुए हैं। सदियों के इतिहास में कोई घटना ऐसी नहीं हुई है, जिसमें हिन्दुओं और पारसियों में हाथापाई की कौन कहे, तू–तू–मैं–मैं भी कभी हुई हो।

हिन्दू धर्मशास्त्रों में गैर हिन्दुओं के लिए कोई अनुचित वचन मुझे नहीं मिला है। हिन्दुओं में ही दलितों या शूद्रों तथा स्त्रियों के प्रति कटुतापूर्ण अन्याय से भरी बातें जरूर हैं, जिनका प्रतिकार बुद्ध, कबीर, नानक, राममोहन राय, ऋषि दयानन्द, गाँधी, आम्बेडकर और लोहिया जैसे धर्माचार्यों, सन्तों और नेताओं ने किया है और जिसका परिणाम उन कथित धर्मशास्त्रीय वचनों का महत्वहीन हो जाना या नेपथ्य में चला जाना है।

किन्तु मुस्लिम धर्मशास्त्रों में गैर मुस्लिमों के बारे में आपत्तिजनक बातें पाई जाती है। कुरान के एक अध्याय का शीर्षक है 'मुहम्मद' (सूरा 47) इस 'सूरा' का परिचय लिखते हुए 'कुरआन' के हिन्दी अनुवादक मुहम्मद फारूक खाँ बताते हैं– ''प्रस्तुत 'सूरा' में साफ–साफ बता दिया गया है कि एक 'ईमान' वाले व्यक्ति और 'काफिर' के बीच वास्तविक अन्तर क्या है?... प्रस्तुत 'सूरा' में 'ईमान' वालों को 'काफिरों' से युद्ध करने का आदेश देते हुए कहा गया है कि अब जब 'काफिरों' से (लड़ाई में) मुठ–भेड़ हो तो उनकी गरदनें मारो यहाँ तक कि उन्हें अच्छी तरह कुचल कर रख दो फिर बचे हुए लोगों को कैद करो और फिर बाद में उचित समझो तो, उन पर एहसान करके रिहा कर दो या 'फ़िदया' ले कर उन्हें छोड़ दो। (पृ. 926, चतुर्थ संस्करण)।'' कुरआन के हिन्दी अनुवादक ने ये वचन इसी 47 वें 'सूरा' के पहली तथा चौथी 'आयतों' के आधार पर लिखे हैं।

मैं समझता हूँ कि इन आयतों की पुनर्व्याख्या होनी चाहिए। इन आयतों का यह अर्थ उस समय उस परिवेश में कदाचित् संगत रहा होगा। आज के सन्दर्भ में अपने से भिन्न विचारधारावाले अनुयायियों के प्रति ऐसी असहिष्णुता कदापि उचित नहीं है और न ऐसा अर्थ मानते हुए साम्प्रदायिक समरसता का पथ प्रशस्त हो सकता है।

साम्प्रदायिकता के मूल में इन वचनों की युगानुरूप व्याख्या न करने के कारण ही कांग्रेस के सभपति मौलाना मोहम्मद अली ने महात्मा गाँधी के लिए कहा था कि "एक गिरा हुआ मुसलमान भी दूसरे गैर मुस्लिम की अपेक्षाकृत उच्च है, चाहे वह महात्मा गाँधी जैसे उच्च चरित्रवाला भी क्यों न हो।"

जाहिर है कि साम्प्रदायिक सौहार्द–भाव बनाये रखने के लिए हमें हमेशा तत्पर रहना चाहिए और ईमानदारी से सार्थक प्रयास करना चाहिए।

चलभाष–09415185521

कौन प्रभु उपासना करता है

● यश वर्मा

ओ३म ईङन्ते त्वामवस्यवः कण्वासो वृक्तबर्हिषः।
हविष्मन्तो अरङकृतः ।। ऋग्वेद 1.14.5

इस मन्त्र का अर्थ है कि हे परमेश्वर, अवस्यु, कण्व, वृक्तबर्हिष, हविष्मन्त और अरङकृत तुझको भजते हैं अर्थात तेरी स्तुति, उपासना करते हैं।

1. अवस्यु कौन है? अवस्यु वह है जो हृदय से अपनी रक्षा चाहता है। रक्षा किससे चाहता है? रक्षा चाहता है पाप–ताप, दुर्गुण, व्यसन, दुख–दर्द, कष्ट क्लेश, अपराध, छल–कपट, फरेब, अनाचार, व्यभिचार, भ्रष्टाचार, बुराई से। जो सच्चे हृदय से इन सबसे रक्षा चाहता है वह अवस्यु है। परमात्मा पवित्र है तो वह अवस्यु को भी शुद्ध, पवित्र, सरल, निश्छल, स्वच्छ, निर्मल बना देगा। तभी तो हम नित्य प्रति दिन में कई बार इस मन्त्र को बोलते हैं:–

ओ३म विश्वानि देव सवितर्दुरितानि पराऽसुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव।।
ओ३म युयोध्यस्मज्जुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम।।

हे प्रभु हमें अच्छे गुण, कर्म, स्वभाव प्रदान करो और हमारी कुटिलता को दूर कर दो, हमारी बुराई को दूर कर दो।

संस्कृत में अव धातु का अर्थ है गति। जो प्रभु से उत्साह व प्रेरणा पाकर गतिशील अर्थात एक्टिव हो जाते हैं जैसे महर्षि स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द आदि और वर्तमान में देखें तो बाबा रामदेव जिन्होंने लाखों करोड़ों लोगों को गतिमान कर दिया, योग के द्वारा। गति–ज्ञान–गमन अर्थात विशेष ज्ञान जो हृदय को आलोकित कर दे, प्रकाशमान कर दे। ऐसे व्यक्ति के कार्य दिव्य हो जाते हैं, आचरण दिव्य हो जाता है, श्रेष्ठ पुरुष बन जाते हैं। ऐसे व्यक्ति का आहार, व्यवहार, विचार, स्वभाव बदल जाते हैं। वह निराला व आला व्यक्ति बनकर उभरता है। वह जो विशेष पाना चाहता है, उपलब्ध करना चाहता है, उसे सब मिल जाता है। धन, संतान, पुत्र, पौत्र तो सबके पास हैं परन्तु ऐसे अवस्यु को अद्वितीय शांति, सुख, पवित्रता, दिव्यता मिलते हैं। जो ये सब चाहता है वह प्रभु की उपासना करता है।

अव का अगला अर्थ है कांति अर्थात आभा, प्रभा। अंग्रेजी में इसे औरा कहते हैं। आजकल तो औरा टेस्ट करने के यन्त्र भी आ गए हैं। जो प्रभु की सच्ची उपासना करता है उतनी उसकी कांति बढ़ती जाती है। प्रभु अग्नि स्वरूप है, प्रकाश स्वरूप हैं। जो उसका साधक है, साधना में रत रहता है वह पवित्र, सरल, निश्छल, सौम्य, शांत हो जाता है। उसकी कांति दिन प्रतिदिन बढ़ती जाएगी। अव का अगला अर्थ है प्रीति। इस संसार में प्रीति, प्यार, दुलार, स्नेह तो सबको मिलता रहता है लेकिन साधक को प्रभु की प्रीति, स्नेह, प्यार, दुलार मिलने लगता है। जो श्रद्धा–भक्ति से प्रभु की स्तुति, उपासना करता है प्रभु उससे प्रीति करते हैं।

अव का एक अर्थ है तृप्ति। संसार के सभी सुख भोगने पर भी जिनकी तृप्ति नहीं होती, वे प्रभु को भजते हैं। एक ऐसी अवस्था आ जाती है जब सांसारिक पदार्थ, धन, वैभव, पत्नी, संतान आदि किसी को तृप्त नहीं कर पाते, फिर वे प्रभु को भजते हैं। इतिहास में कई ऐसे राजे महाराजे हुए हैं जिन्होंने सब कुछ त्याग कर प्रभु की उपासना की जैसे बुद्ध, महावीर, भोज आदि।

अव का एक अर्थ अवगम भी है अर्थात जानना। संसार को नहीं बल्कि विशेष रहस्यों को जानना, जिन्हें जानने से व्यक्ति के संशय मिट जाते हैं। उपनिषदों के ऋषि, दर्शन शास्त्रों के ऋषि, वेदों के सही अर्थ करने वाले ऋषियों ने न जाने कितने गूढ़ रहस्य जाने होंगे, जन्म–मृत्यु, आत्मा–परमात्मा के विषय में, कर्म गति, परम गति के बारे में, बन्ध–मोक्ष के बारे में। ऐसे ऋषि अवस्यु ही तो थे जो हमारा मार्ग दर्शन करते रहे हैं। हम लोगों के लिए अध्यात्म की राह दिखा गए हैं।

अव का एक अर्थ है स्वाम्यर्थ अर्थात स्वामित्व। क्या जो दुनियां पर स्वामित्व चाहते हैं वह अवस्यु हैं, नहीं। जो अपने ऊपर स्वामित्व चाहते है, उपने शरीर, मन, इन्द्रियों पर अधिकार, नियंत्रण चाहते हैं। हमारा कान कुछ भी सुनवा देता है, आँख कुछ भी दिखा देती है, नाक कुछ भी सुघवा देती है, मन तो जागते हुए भी और सोते हुए भी हमारे वश में नहीं आता। हमारा मन, बुद्धि, इन्द्रियां हमारे से कुछ भी करवा लेती हैं। परन्तु जो अपने ऊपर अधिकार, नियंत्रण, स्वामित्व चाहते हैं, वे उस परमपिता परमेश्वर को भजते हैं व अपने स्वामी स्वयं बनते हैं।

अव का एक अर्थ है याचना अर्थात मांगना। जिनको धन, अन्न, वस्त्र अर्थात सांसारिक पदार्थों की आवश्यकता है परन्तु किसी से मांगना नहीं चाहते, वे प्रभु की स्तुति, उपासना करते हैं। तभी तो सन्ध्या के प्रथम मंत्र "ओ३म शन्नो देवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयो रभिस्रवन्तु तये नः" ।। में प्रभु से मनोवांछित व पूर्णानन्द की कामना की गई है। प्रभु मनोवांछित तो देते ही हैं और सच्चे हृदय से संकल्प करके, पूर्ण पुरुषार्थ किया जाए तो पूर्णानन्द भी प्रदान करते हैं। अव का अगला अर्थ है इच्छा अर्थात इच्छा विशेष। इच्छा विशेष की पूर्ति के लिए उपासना करते हैं। हमारी मलिनता उस अग्निरूप प्रभु में पड़कर कुन्दन बन जाती है। प्रभु की विशेष अनुकम्पा होती है। मुंशी राम से स्वामी श्रद्धानन्द बन जाते हैं। अमींचन्द जैसा व्यक्ति हीरा बनकर एक कवि बन जाता है।

अव का एक अर्थ है दीप्ति अर्थात प्रकाश। जो जीवन में सच्चा प्रकाश अर्थात ज्ञान चाहते हैं, प्रभु उनके हृदयगत तम को मिटाकर प्रकाश कर देता है। इन्द्रिय रूप गवाक्षों– खिड़कियों– छिद्रों से प्रकाश बाहर भी देदीप्यमान हो जाएगा।

अव का एक अर्थ है प्राप्ति। जो हमें मानव रूप में प्रभु से प्राप्ति हुई है जैसे यह शरीर, इसका एक–एक अंग सिर, नाक, कान, आंख, हाथ, पैर, दांत, लिवर, किडनी, हृदय, मन, बुद्धि, स्मरण शक्ति, नस, नाड़ी तंत्र आदि। प्रभु से जो हमें इस रूप में प्राप्ति हुई है इसे देखकर, इसे अनुभव कर निहाल हो जाता है। फिर मानव कह उठता है कि हे प्रभो, आप कितने महान हो और बारम्बार उसका धन्यवाद करते हुए उसकी उपासना करता है। अव का एक अर्थ है आलिंगन। जो प्रभु का आलिंगन करना चाहते हैं तो प्रभु को भजते हैं कि शायद प्रभु कभी हमें अपने आलिंगन में ले लेगा। अपनी गोद में लेकर परम पद तक पहुँचा देगा। अव का एक अर्थ है हिंसा। हिंसा किसी पशु या व्यक्ति की नहीं करनी है बल्कि अच्छे उद्देश्य की प्राप्ति के लिए साधक को हिंसा करनी है अति काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, राग, द्वेष रूपी शत्रुओं की। ऐसे साधक प्रभु की उपासना करते हैं। अव का एक अर्थ है वृद्धि। जो हृदय से अपनी वृद्धि अर्थात उन्नति चाहता है वह प्रभु को भजते हैं। ईमानदारी से, धर्मपूर्वक पूर्ण पुरुषार्थ के पश्चात जो मिले उसे प्रसन्नतापूर्वक अहोभाग्य मानकर संतुष्ट रहते हुए प्रभु की स्तुति करते हैं। इस प्रकार जो चाहते हैं। अपने जीवन में गति–कांति–प्रीति–तृप्ति –अवगम–स्वामित्व–याचना–इच्छा–दीप्ति–अवाप्ति आलिंगन–हिंसा–वृद्धि वेसबपरमपिता परमेश्वर की स्तुति–प्रार्थना–उपासना करते है, प्रभु को दिल से भजते हैं, वे सब अवस्यु हैं।

2. ऋग्वेद के इस मन्त्र में दूसरा शब्द आया हैं। ''कण्वासो''। कण्व का अर्थ है मेधावी, बुद्धिमान, अकलमंद। प्रायः हम लोग प्रकृति की अर्थात संसार की, धन वैभव की उपासना करते हैं। यह बालबुद्धि के समान है, जैसे बच्चा खिलौने देखकर उनमें मस्त हो जाता है और माँ को ही भूल जाता है ऐसे लोग इसी लोक को मानते हैं व बार–बार मृत्यु पाश में आते रहते हैं। कठोपनिषद का ऋषि कहता है कि प्रभु का ज्ञान लोगों को सुनने को नही मिलता अर्थात केवल कानों से सुनने का भाव नहीं है यहां पर। सुनने का भाव है कि हम प्रभु के ज्ञान को हृदयंगम नहीं कर पाते। हम लक्ष्मी के भक्त बने रहते हैं और नारायण से दूर रहते हैं। जो कण्वास है अर्थात बुद्धिमान है वह प्रभु के ज्ञान को हृदयंगम कर लेता है और सच्चा ज्ञान उतना ही है जितना हमारे आचरण में आ जाता है, शेष तो शाब्दिक ज्ञान बन कर रह जाता है। बुद्धिमान, मेधावी लोग प्रभु को भजते हैं वही कण्वास है। वह ही अपना मानव जीवन सफल कर पाते हैं।

3. इस मंत्र का तीसरा शब्द है ''वृक्तबर्हिषे''। इसका अभिप्राय है जो ऋत्विज है अर्थात ऋतु ऋतु में यज्ञ करने वाले हैं, आसन लगाने वाले हैं। श्रद्धा व प्रेम से घी, समाग्री, समिधा व भात से मन्त्रोच्चारण करते हुए यज्ञ, वहन करते हैं। ऐसे लोग पृथ्वीलोक से यानी भोगविलासों से ऊपर उठकर अन्तरिक्ष लोक अर्थात सत्संग, स्वाध्याय की ओर बढ़ते हैं। फिर धीरे धीरे संयम, धारणा, ध्यान, समाधि के द्वारा ऐसे लोग द्यौलोक को प्राप्त कर लेते हैं। वे अपनी वासनाओं को उखाड़ फेंकते हैं। प्रभु ध्यान में डूबे रहते हैं। मन प्रभु के सिवा कहीं और लगता ही नहीं। शांति और आनन्द को प्राप्त कर लेते हैं।

4. इस मन्त्र का चौथा शब्द है ''हविष्मन्तः'' जिसका अभिप्राय है कि जो सदा अपने हाथों में हवियां रखते हैं। ऐसे व्यक्ति सदैव अपने झोले में अन्न, खाद्य पदार्थ, दूध, फल, वस्त्र, कम्बल, शाल, धन, ज्ञान–विज्ञान, आदि पदार्थ रखते हैं ताकि जहां कहीं जरूरतमंद, साधु, सन्यासी, विद्वान, विद्यार्थी मिले, उनको श्रद्धा व प्रेम से दिया जा सके। जो दूसरों को दे के खाता, पीता, पहनता है वह हविष्मन्तः है। जिसका सादा जीवन है और उच्च विचार हैं प्रभु के प्रति आत्मसमर्पण की भावना है, अतिथि यज्ञ करता है, मातापिता की सेवा सुश्रूषा करता है, ऐसा व्यक्ति प्रभु की उपासना करता है। श्रद्धा से व प्रेम से किया हुआ दान व सेवा सदैव अधिक फलदायी व आशीर्वाद से भरपूर होता है यद्यपि बिना श्रद्धा के दान व सेवा भी कुछ फलदायी तो अवश्य है।

5. इस मन्त्र का अन्तिम शब्द है "अरङकृत" अर्थात अलंकृत। जो अपने आपको अलंकृत करना चाहते हैं। क्या हमें अपने को वस्त्रों व आभूषणों से अलंकृत करना है, नहीं। मानव जीवन मिला है तो अपने को अलंकृत करो यज्ञ आदि शुभ कर्मों से, शास्त्रों के श्रवण मनन से, अध्यात्म की राह पकड़ कर श्रेय मार्ग पर चलने से, परोपकार, दान–पुण्य, सत्कर्म, निष्काम कर्म करते। अलंकृत वो होता है जो अलं कर सकता है। अलं का अर्थ है बस। जो घर परिवार को अलं कह सकता है वो आत्मा–परमात्मा के बारे में सोच विचार करके अपने जीवन को, समाज व राष्ट्र को उन्नत कर सकता है। प्रातः सोने को, टी.वी. को फालतू देखना, सुनना–बोलना–विचारना इन सबको अलं करना है। सामान्य कार्यों को अलं करके स्वाध्याय, सत्संग, प्रवचन, ध्यान, भजन से अलंकृत जो व्यक्ति हो जाता है, वही आत्मकल्याण कर सकता है। ऐसे व्यक्ति प्रभु को भजते हैं, उसकी उपासना करते हैं।

महर्षि दयानन्द जी सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति हर समय उपासना में रहता है। उपासना का अर्थ है समीप रहना। हम या तो प्रकृति अर्थात संसार के समीप रहते हैं अथवा प्रभु के समीप रहते हैं। यदि हमें सचमुच कुछ पाने की लालसा है तो उस प्यारे प्रभु की उपासना करनी होगी जो हमारी मनोवांछित कामनाओं को पूर्णकर सकता है और साथ ही मोक्ष की प्राप्ति भी करवा सकता है।

ओ३म के ही ध्यान से,
और ध्यान से ही योग तक,
जीवन के अन्तिम लक्ष्य तक,
यह ओ३म ही पहुँचायेगा।

सर्व सिद्धिदायक वैदिक–यज्ञ

यज्ञ (अग्निहोत्र) ब्रह्माण्ड के जड़–चेतन पदार्थों से जुड़ी वह पद्धति है जिसे आचरण में लाकर मनुष्य जो सभी योनियों में श्रेष्ठ समझा जाता है, वह सुख बटोरता है और परोसता है। यज्ञ का उद्देश्य मनुष्य को असुरत्व और मनुष्यत्व से ऊपर उठा कर देवत्व को प्राप्त कराना है। प्रकृति अर्थात् पंच महाभूत तत्त्वों व समस्त प्राणी मात्र को स्वस्थ शुद्ध वातावरण देकर सुख–शान्ति देना है। जो विज्ञान यज्ञ की भावना से रहित है, वह समाज को सुख–सुविधा तो दे सकता है किन्तु वह मानव को शान्ति, आनन्द और पवित्र वातावरण नहीं दे सकता। यज्ञ को वेद तथा वैदिक वाङ्मय में 'विश्वतोधार' कहा गया है। वैदिक शास्त्रों की इस परिभाषा पर जितना ही विचार करें उतनी ही यह गहरी और यथार्थ दृष्टिगोचर होती है। यज्ञ का धूम्र जहाँ मनुष्यों के लिये उपकारी है वहीं पशु–पक्षी, वृक्ष इत्यादि जो मूक जगत् है उसके लिए भी उतना ही सहकारी है।

'यज्ञ' शब्द का प्रयोग होते ही जो सहज अर्थ समझ में आता है, वह है–किसी उद्देश्य से किसी देवता के लिये मंत्रोच्चार के साथ हवनकुंड की अग्नि में घी, सामग्री और समिधा द्वारा आहुति प्रदान करना। यह अर्थ सामान्य हवन अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध तक यज्ञों के लिये समझा जाता है। वास्तव में 'यज्ञ' यह एक गुना आदान और सहस्त्रगुना प्रदान की प्रक्रिया है। यह वैदिक संस्कृति का आधारस्तंभ है। 'यज्ञ' शब्द 'यज्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है–देवपूजा, संगतिकरण और दान।

1) देवपूजा–जो ज्ञान, कर्म और अनुभव में श्रेष्ठ हैं, वे देव हैं उनका आदर–सत्कार करना, उन्हें संतुष्ट रखना देवपूजा है।
2) संगतिकरण–सबके साथ मिलकर काम करना और उन्नति करना।
3) दान–अपने ज्ञान व उपलब्धियों से दान करना और समाज को लाभ देना।

ये तीनों कार्य यज्ञ में समाए हुए हैं। संसार के सभी श्रेष्ठ कर्म यज्ञ कहलाते हैं। योगेश्वर श्रीकृष्ण ने गीता (18/5) में कहा है–

यज्ञ दानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।

=यज्ञ, दान और तप ये कर्म छोड़ने नहीं चाहिए क्योंकि

यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्।।

=ये तीनों यज्ञ, दान और तप मनुष्य को पवित्र करने वाले हैं।

'यज्ञो वै विष्णु'–यज्ञ ही सर्वव्यापक विष्णु है और 'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म' प्रत्येक शुभ कार्य यज्ञ है, जो निस्पृह जीवन की साधना सिखाता है। 'इदं न मम' यह मेरा नहीं है। यह सब उस व्यापक ईश्वर की देन है। यज्ञ की आत्मा 'स्वाहा' है। उपासक कहता है–सु+आह=उत्तम बात कही। जो कुछ मेरी अंतर आत्मा में है वही कहा है, स्व+आह=स्वाहा। जो मेरे आधीन हैं वही मेरा है, किसी दूसरे का मेरे जीवन में कुछ नहीं है। यज्ञ त्यागमय जीवन के आदर्श का प्रतीक है। 'इदं न मम' इन भावनाओं से ही हमारा सनातन आध्यात्मिक समाजवाद जीवित रह सकता है। 'यज्ञ' का अर्थ है–त्याग, परोपकार। वैयक्तिक उन्नति और सामाजिक प्रगति का सारा आधार इसी एक प्रवृत्ति पर निर्भर है। मनुष्य का जन्म भी इसी यज्ञ–भावना के कारण होता है। माता शिशु का निर्माण बिना किसी स्वार्थ भाव के करती है। इसी बात को गीताकार ने कहा है–प्रजापति ने यज्ञ को मनुष्य के साथ संस्कार रूप में जुड़वा भाई की तरह पैदा किया और यह व्यवस्था की कि दोनों एक दूसरे का अभिवर्धन करते हुए बढ़ते रहें।

यज्ञ की ऊष्मा मनुष्य के अंतःकरण पर देवत्व का प्रभाव डालती है। प्रत्येक नर–नारी बच्चे विशेषतया गर्भस्थ शिशु यज्ञीय शक्ति से तथा उस वातावरण के कारण सुसंस्कारित होते हैं। यज्ञीय प्रभाव से दुर्जन से दुर्जन भी सुसंस्कृत होते हैं। इसलिये स्वर्गीय आनंद को देने वाले यज्ञ के लिये कहा है–'स्वर्ग कामो यजेत'–सुख चाहने वाले को यज्ञ करना चाहिए। गाय का घी, औषधियाँ जड़ी–बूटी मिष्ठान तथा आम, नीम, बड़, चंदन, पलाश, शमी, गूलर आदि स्वास्थ्यवर्धक वृक्षों की समिधाओं से जब यज्ञ किया जाता है तब अग्नि उन वस्तुओं को सूक्ष्म बनाकर समस्त जड़ चेतन प्राणियों को, बिना किसी अपने–पराए शत्रु–मित्र का भेद किए श्वास द्वारा इस प्रकार खिला देती है कि यह पता भी नहीं चलता कि यह पौष्टिक तत्त्व किस दानी ने, गुप्त दान के रूप में खिला दिया। यह एक श्रेठ ब्रह्मभोज का पुण्य प्राप्त करने का सर्वोत्तम उपाय है।

यज्ञ सामूहिकता का प्रतीक है, इसे सब मिलकर करते हैं। महायज्ञों से सहकारिता और एकता की भावना विकसित होती है। यज्ञ एक मनोवैज्ञानिक तत्त्व है जिसके द्वारा मानसिक रोगों, दुर्गणों का क्रमशः नाश और सद्भावों की वृद्धि होती है। काम, क्रोध, मोह आदि मानसिक उद्वेगों और शरीर के असाध्य रोगों के निवारण के लिए 'यज्ञ' एक विश्वस्त पद्धति है इसके कई प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। 'भोपाल गैस कांड' के समय 2/3 दिसंबर 1984 को जब विषैली गैस फैलने लगी थी, तब दो अग्निहोत्री परिवारों ने तुरंत यज्ञ करना शुरू कर दिया। गाय के गोबर के कण्डे, घी, सामग्री, कपूर आदि के धुएँ की रोगनाशक सुगंध से बीस मिनिट में ही वे दोनों परिवार दूषित हवा से बच गए।

अग्निहोत्र के भौतिक लाभ भी हैं। जल और वायु को हम अपने शरीर की गंदगी, घर की और कल कारखानों से निकले गंदे पानी, कचरा और दूषित वायु से अशुद्ध करते हैं जिसके कारण अनेक रोग बढ़ते हैं। जब हम वातावरण को दूषित करते हैं तो उसे शुद्ध करना हमारा सामाजिक उत्तरदायित्व है अतः यज्ञ से यह प्रयोजन भी सिद्ध होता है। यज्ञ करने से समिधा घी और औषधियुक्त यज्ञ सामग्री का धुआँ आकाश में जाकर बादलों में परमाणु बनकर मिल जाता है। फिर वर्षा के जल के साथ वह पृथ्वी पर आता है, उस परिपुष्ट जल से पौष्टिक अन्न, फल, वनस्पतियाँ औषधियाँ उत्पन्न होती हैं, जिसका सेवन कर मनुष्य, पशु–पक्षी सभी शक्तिशाली बनते हैं। यज्ञाग्नि के माध्यम से प्राप्त ओजस्वी–तेजस्वी मंत्रोच्चार की ध्वनि का कंपन सुदूर क्षेत्र में बिखरकर लोगों का मानसिक परिष्कार करता है। फलस्वरूप शरीर की तरह मानसिक स्वास्थ्य भी बढ़ता है। मंत्रों की स्वर लहरी ओंकार का नाद लबी श्वास लेकर आँखें बंद करके दोनों भौंहों के बीच में ईश्वर का ध्यान कर– ओऽऽऽऽऽऽम्ऽऽऽऽऽऽ इस तरह जितनी देर तक बोल सकें बोलने से आप अनुभव करेंगे कि आपके मस्तिष्क की नसों के कंपन से मस्तिष्क की ओर जाने वाले रक्त के प्रवाह की रुकावट दूर होकर स्वस्थ रक्त संचार हो रहा है जो स्फूर्ति और चेतनता को बढ़ा रहा है। इस तरह मस्तिष्क की नसों के झंकृत होने से रक्त संचार तेज होकर बौद्धिक शक्ति भी बढ़ती है।

यज्ञ पर किए गए वैज्ञानिक प्रयोगों से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि वेदों और दर्शनों पर आधारित नित्य यज्ञ कर्म करने का नियम केवल आध्यात्मिक ही नहीं है यह वातावरण की शुद्धि के लिए अत्यंत आवश्यक है। यज्ञ का धुआँ वातावरण में मिलकर न सिर्फ कार्बनिक पदार्थों को जलाता है बल्कि हवा में सल्फर डाइ–ऑक्साइड, नाइट्रस (प्रदूषणों) तथा पानी में मिले कीटाणुओं की संख्या को भी कम करता है। यज्ञ की भस्म में फास्फोरस, पोटेशियम, मॅग्नेशियम और नाइट्रोजन जैसे तत्त्व होते हैं जो मिट्टी में मिलकर पौधों की समुचित वृद्धि करते हैं और हानिरहित खाद का काम करते हैं। कई वैज्ञानिक परीक्षणों के द्वारा हवन से पहले की हवा और पानी और बाद के हवा पानी की जाँच में पाया गया, जिस तरह यज्ञ के अनुष्ठान से वायु और वृष्टि जल की उत्तम शुद्धि और पुष्टि होती है, वैसी दूसरे उपाय से कभी नहीं हो सकती।

'यज्ञ' एक महाविज्ञान है–जैसे कहते हैं, An Apple a day keeps the doctor away. इसी तरह प्रतिदिन यदि एक हवन–यज्ञ किया जाए तो आत्मिक पवित्रता तो मिलेगी ही, यह वातावरण के प्रदूषण, विषाणुओं और भू वंध्यता को भी दूर करेगा। त्रेतायुग में सत्यवादी हरिश्चन्द्र के जलोदर रोग को यज्ञ चिकित्सा द्वारा ठीक किया गया था। प्राचीन काल में महाराज दशरथ ने औषधियों से युक्त 'पुत्रेष्टि–यज्ञ' द्वारा श्रेष्ठतम पुत्रों को प्राप्त किया। राजा जनक के राज्य में जब दुर्भिक्ष पड़ा था तब यज्ञ द्वारा वृष्टि करवा कर अन्न उत्पन्न किया था। इन महान यज्ञों से जटिल रोगों, कैंसर, पागलपन आदि को भी औषधि युक्त घी, सामग्री से ठीक किया गया है। इसी तरह वर्षा के लिए 'वृष्टियज्ञ' हुआ करते थे, वर्षा रोकने के लिए भी 'अनावृष्टियज्ञ' होते थे। बड़े–बड़े राजा–महाराजा राजसूय यज्ञ आदि महायज्ञ करवाते ही रहते थे जिससे वातावरण सदा शुद्ध पवित्र रहता था। यही कारण है कि सभी उत्सवों, त्यौहारों तथा मांगलिक अवसरों पर यज्ञ हुआ करते हैं। इन अवसरों पर कौन किस संक्रामक रोग के जीवाणुओं का वाहक है, यह जानना बहुत कठिन होता है अतः जहाँ इस तरह के यज्ञ हुआ करते हैं, वहाँ यज्ञ देव संक्रामक जीवाणुओं को स्वतः ही नष्ट कर देते हैं और वातावरण शुद्ध बना रहता है।

यज्ञ की हवि में प्रमुख स्थान घृत=घी का है। इसे 'आज्य' भी कहते हैं।– 'आज्य' का अर्थ है–आ समन्तात् लोकन जयते अनेन

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

'यज्ञो वै विष्णु'–यज्ञ ही सर्वव्यापक विष्णु है और 'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म' प्रत्येक शुभ कार्य यज्ञ है, जो निस्पृह जीवन की साधना सिखाता है। 'इदं न मम' यह मेरा नहीं है। यह सब उस व्यापक ईश्वर की देन है। यज्ञ की आत्मा 'स्वाहा' है। उपासक कहता है–सु+आह=उत्तम बात कही। जो कुछ मेरी अंतर आत्मा में है वही कहा है, स्व+आह=स्वाहा। जो मेरे आधीन हैं वही मेरा है, किसी दूसरे का मेरे जीवन में कुछ नहीं है। यज्ञ त्यागमय जीवन के आदर्श का प्रतीक है। 'इदं न मम' इन भावनाओं से ही हमारा सनातन आध्यात्मिक समाजवाद जीवित रह सकता है। 'यज्ञ' का अर्थ है–त्याग, परोपकार। वैयक्तिक उन्नति और सामाजिक प्रगति का सारा आधार इसी एक प्रवृत्ति पर निर्भर है। मनुष्य का जन्म भी इसी यज्ञ–भावना के कारण होता है। माता शिशु का निर्माण बिना किसी स्वार्थ भाव के करती है। इसी बात को गीताकार ने कहा है–प्रजापति ने यज्ञ को मनुष्य के साथ संस्कार रूप में जुड़वा भाई की तरह पैदा किया और यह व्यवस्था की कि दोनों एक दूसरे का अभिवर्धन करते हुए बढ़ते रहें।

"द्रोपदी के पाँच पति नहीं थे और श्री कृष्ण की अनेक पत्नियाँ नहीं थी"

● डॉ. वेद प्रकाश आर्य

6 दिसम्बर 2015 के 'आर्यजगत' में 'एक या पाँच' शीर्षक से लिखा एक लेख पढ़ा। इसे पढ़कर अत्यधिक आश्चर्य हुआ कि अब आर्यसमाज के पत्र में भी पौराणिक मान्यता के लेख छपने लगे। इस लेख में लेखक श्री अभिमन्यु कुमार खुल्लर ने बिना किसी प्रमाण के ही यह लिखा है कि द्रौपदी के पाँच पति थे तथा श्री कृष्ण की अनेक पत्नियाँ थीं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती तथा उनके अनुयायी–पण्डित चमूपति, बंकिमचन्द, स्वामी वेदानन्द तीर्थ, अमर स्वामी जी, स्वामी जगदीश्वरानन्द, महात्मा प्रेम भिक्षु, पण्डित भवानीप्रसाद, आदि अनेक सुप्रसिद्ध आर्य विद्वानों की यह सर्वविदित मान्यता है कि महाभारत में अनेक स्थल प्रक्षिप्त हैं, परन्तु उक्त लेख के लेखक को इन सबकी मान्यता स्वीकार नहीं है।

द्रौपदी के पाँच पति और श्री कृष्ण की अनेक पत्नियाँ बताना पूर्णतः असत्य, कपोल–कल्पित, वेद–विरुद्ध, तथा पतिव्रता द्रौपदी और श्री कृष्ण जी महाराज के चरित्रों को कलंकित करना है।

सत्य यह है कि द्रौपदी का एकमात्र पति युधिष्ठिर था और श्री कृष्ण की एकमात्र पत्नी रुक्मणी थी। इन दोनों बातों को मैं सप्रमाण यहाँ सिद्ध कर रहा हूँ–

"द्रौपदी के पाँच पति नहीं थे"

आप सम्पूर्ण महाभारत को पढ़ लीजिए, किन्तु आपको उसमें कहीं भी यह लिखा नहीं मिलेगा कि द्रौपदी का विवाह अर्जुन के साथ हुआ था। यह सत्य है कि अर्जुन ने स्वयंवर में लक्ष्यवेध करके द्रौपदी को जीता था, किन्तु द्रौपदी का विवाह अर्जुन के साथ नहीं हुआ। द्रौपदी का विवाह तो केवल युधिष्ठिर के साथ ही हुआ था। इसके कतिपय प्रमाण देखिए और सत्यासत्य का विचार कीजिए–

1. युधिष्ठिर–अर्जुन–संवाद

लक्ष्यवेध के पश्चात् युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा–

त्वया जिता फाल्गुन याज्ञसेनी,
त्वयैव शोभिष्यति राजपुत्री।
प्रज्वाल्यतामग्नीरमित्र साह,
ग्रहण पाणि विधिवत् त्वमस्याः।। (महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 190, श्लोक 7)

अर्थ–हे अर्जुन! तुमने द्रौपदी को जीता है। इसलिए तुम्हारे साथ ही इस राजकुमारी की शोभा होगी। शत्रुओं का सामना करने वाले वीर! तुम अग्नि प्रज्वलित करो और विधिवत् इस राजपुत्री का पाणिग्रहण करो।।

युधिष्ठिर के इस कथन का उत्तर देते हुए अर्जुन ने कहा–

मा मा नरेन्द्रत्वधर्मभाजं,
कृथा न धर्मोऽयमशिष्ट द्रष्टः।
भवान् निवेश्यः प्रथमं ततोऽयं,
भीमो महाबाहुर चिन्त्यकर्मा।।
अहं ततो नकुलोऽनन्तरं मे,
पश्चादयं सहदेवस्तरस्वी।
वृकोदरोऽहं च यमौ च राजन्निय
च कन्या भवतो नियोजयाः।। (महाभारत, आदि पर्व, अध्याय 190, श्लोक 8,9)

अर्थ–हे महाराज! आप मुझे अधर्म का भागी मत बनाइये (बड़े भाई के अविवाहित रहते छोटे भाई का विवाह हो जाए) यह धर्म नहीं है। ऐसा व्यवहार तो अनार्यों में देखा गया है। पहले तो आपका विवाह होना चाहिए। तत्पश्चात अचिन्त्यकर्मा महाबाहु भीमसेन का और फिर मेरा। तत्पश्चात नकुल और फिर वेगवान् सहदेव विवाह कर सकते हैं। हे राजन! भाई भीमसेन, मैं, नकुल, सहदेव तथा यह राजकन्या, हम सभी आपकी आज्ञा के अधीन हैं।।

अर्जुन का यह कथन सिद्ध करता है द्रौपदी का विवाह अर्जुन के साथ नहीं, वरन् सबसे बड़े भाई युधिष्ठिर के साथ हुआ था।

2. युधिष्ठिर और द्रुपद–संवाद

अर्जुन के इस प्रस्ताव को युधिष्ठिर ने उचित समझा, किन्तु राजकन्या के पिता की स्वीकृति के बिना यह सम्भव नहीं था। ऐसा विचारकर यधिष्ठिर राजा द्रुपद के समीप गए और यह कहा–

तमब्रवीत ततो राजा धर्मात्मा च युधिष्ठिरः।
ममापि दार सम्बन्धः कार्यस्तावद् विशाम्पते।। (महाभारत, आदि पर्व, अध्यांय 194, श्लोक 2।)

अर्थ–धर्मात्मा युधिष्ठिर ने राजा द्रुपद से कहा कि हे राजन्! मेरा भी विवाह सम्बन्ध करने योग्य है। अर्थात् अभी तक मेरा भी विवाह नहीं हुआ है।।

युधिष्ठिर के ये वचन सुनकर राजा द्रुपद यधिष्ठिर से कहते हैं–

भवान् वा विधिवत्,
पाणिं गृहणातु दुहितुर्मम।
यस्य वा मन्यसे वीर,
तस्य कृष्णा मुपादिश।। (महाभारत, आदि पर्व, अध्याय 195, श्लोक 22)

अर्थ–हे वीर! आप ही विधिपूर्वक मेरी पुत्री का पाणिग्रहण करें अथवा आप अपने भाइयों में से जिसके साथ चाहें, उसी के साथ कृष्णा के विवाह की आज्ञा प्रदान करें।। युधिष्ठिर और द्रुपद के इस संवाद से भी यह सिद्ध होता है कि द्रोपदी का पति युधिष्ठिर ही था।

3. व्यास जी का आदेश–वैशम्पायन जी कहते हैं–

ततोऽब्रवीद् भगवान धर्मराजमद्यैव
पुण्याहतमुत वः पाण्डवेय।
अद्य पौष्यं योगमुपैति चन्द्रमाः,
पाणिं कृष्णायास्त्वं गृहाणाद्यपूर्वम्।।
ततो राजा यज्ञसेनः सुपुत्रो,
जन्यार्थमुक्तं बहु तत् तदग्राम्।
समानयामास सुतां च कृष्णा–
माप्लाव्य रत्नैर्बहुभिर्वि भूष्य।। (महाभारत, आदि पर्व, अध्याय 196, श्लोक 5,6)

अर्थ– हे जनमेजय! इसके पश्चात् भगवान व्यास ने धर्मराज युधिष्ठिर से कहा–हे पाण्डुनन्दन! आप लोगों के लिए आज ही पुण्य दिवस है। आज चन्द्रमा भरण–पोषण कारक पुष्य नक्षत्र पर जा रहा है। इसलिये तुम्हीं कृष्णा (द्रौपदी) का पाणि ग्रहण करो।।

व्यास जी का आदेश सुनकर पुत्रों सहित राजा द्रुपद ने वर–वधु के लिए कथित समस्त उत्तम वस्तुओं को मँगवाया और अपनी पुत्री कृष्णा को स्नान कराकर बहुत से रत्नाभूषणों से विभूषित किया।

इस प्रमाण से भी यही सिद्ध होता है कि द्रौपदी का पति युधिष्ठिर ही था।

4. महर्षि धौम्य द्वारा विवाह–संस्कार–

अब आप युधिष्ठिर और द्रौपदी का विवाह–संस्कार देखिये–

ततः समाधाय स वेदपारगो
जुहाव मन्त्रैर्ज्वलित हुताशनम्।
युधिष्ठिर चाप्युनीय मन्त्रविद्–
नियोजयामास सहैव कृष्णा।।
प्रदक्षिणं तौ प्रगृहीतपाणिकौ
समानयामास स वेदपारगः।
ततोऽभ्यानुज्ञाय तमाजिशोभिनं
पुरोहितो राजगृहाद् विनिर्ययौ।। (महाभारत, आदि पर्व, अध्याय 196, श्लोक 11,12)

अर्थ–तत्पश्चात् वेदों के पारंगत विद्वान् मन्त्रज्ञ पुरोहित धौम्य ने (वेदी पर यज्ञकुण्ड में) प्रज्वलित अग्नि की स्थापना करके उसमें मन्त्रों द्वारा आहुति दी और युधिष्ठिर को बुलाकर कृष्णा के साथ उसका गठबन्धन कर दिया।

वेदों के पारगत विद्वान् पुरोहित ने उन दोनों दम्पती का पाणिग्रहण कराकर उनसे अग्नि की प्रदक्षिणा करवाई, फिर (अन्य शास्त्रोक्त विधियों का अनुष्ठान करके) उनका विवाह–संस्कार सम्पन्न कर दिया। इसके पश्चात् संग्राम में शोभा पानेवाले युधिष्ठिर को अवकाश देकर पुरोहित जी भी उस राजभवन से बाहर चले गये।

महाभारत में द्रौपदी और युधिष्ठिर के विवाह की जैसी यह विधि लिखी है, वैसी विधि अर्जुन, भीम, नकुल और सहदेव के साथ सम्पूर्ण महाभारत में कहीं भी नहीं लिखी है। द्रौपदी और युधिष्ठिर के विवाह–संस्कार की इस विधि से यह पूर्णतः सत्य सिद्ध हो जाता है कि द्रौपदी का पति केवल युधिष्ठिर था, अन्य कोई नहीं।

यद्यपि उपर्युक्त प्रमाण पर्याप्त है; तथापि अभी और भी प्रमाण देखिए और सत्यासत्य का निर्णय कीजिए–

5. कुन्ती का आशीर्वाद–

युधिष्ठिर से द्रौपदी का विवाह होने के पश्चात् द्रौपदी को आशीर्वाद देती हुई कुन्ती कहती है–

कुरुजाङ्गलमुख्येषु,
राष्ट्रेषु नगरेषु च।
अनु त्वमाभिषिच्यस्व,
नृपति धर्म वत्सला।। (महाभारत, आदि पर्व, अध्याय 198, श्लोक 9)

अर्थ–तेरा पति कुरुजाङ्गल देश के मुख्य–मुख्य राष्ट्रों और नगरों का महाराजा हो और उसके साथ महारानी के पद पर तेरा अभिषेक हो। तेरे मन में धर्म के प्रति स्वाभाविक प्रेम हो।

यहाँ यह बात विचारणीय है कि अनेक राष्ट्रों का महाराजा तो केवल एक ही पुरुष हो सकता था, पाँचों पाण्डव तो महाराजा बन नहीं सकते थे। प्राचीन वैदिक परम्परानुसार राजा का बड़ा पुत्र ही महाराजा बन सकता था। अपने भाइयों में युधिष्ठिर ही सबसे बड़े थे। इसलिए युधिष्ठिर ही महाराजा बन सकते थे और युधिष्ठिर की पत्नी द्रौपदी ही महारानी बन सकती थी। इस प्रकार कुन्ती द्वारा द्रौपदी को महारानी बनने का आशीर्वाद भी यही सिद्ध करता है कि युधिष्ठिर ही द्रौपदी का पति था।

6. द्रौपदी का कथन–

12 वर्ष के वनवास का समय पूर्ण होने पर पाँचों पाण्डव और द्रौपदी अपने नाम और वेश परिवर्तित कर मत्स्यदेश के राजा विराट के नगर में रह रहे थे। उस समय द्रौपदी का नाम सैरन्ध्री था। राजा विराट की पत्नी का भाई कीचक द्रौपदी पर कुदृष्टि रखता था। इस स्थिति से अत्यन्त दुखी होकर द्रोपदी भीमसेन के पास जाकर रोने लगी। जब भीमसेन ने द्रौपदी से यह पूछा कि तुम क्यों रोती हो? तब द्रौपदी ने जो कहा वह द्रष्टव्य है–

अशोच्यत्वं कुतस्तस्य
यस्य भर्ता युधिष्ठिरः।
जानन् सर्वाणि दुःखानि,
किं मां त्वं परिपृच्छसि।। (महाभारत, विराट पर्व, अध्याय 18, श्लोक1)

अर्थ–द्रौपदी कहने लगी–जिस नारी का पति राजा युधिष्ठिर हो, वह बिना शोक रहे, यह कैसे सम्भव हो सकता है? तुम मेरे सब दुःखों को जानते हुए भी मुझसे कैसे पूछते हो?

द्रौपदी का यह कथन स्वयं सिद्ध कर रहा है कि द्रौपदी का पति केवल युधिष्ठिर ही था।

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

7. भीमसेन की घोषणा–

भीमसेन ने उस दुष्ट कीचक को मार दिया था, जो द्रौपदी के साथ दुराचार करना चाहता था। भीम प्रसन्न होकर कहता है–

अद्याहमनुणो भूत्वा,
भ्रातुर्यार्यापहारिणम्।
शान्ति लब्धास्मि परमां,
हत्वा सरन्धि कण्टकम्।। (महाभारत, विराट पर्व, अध्याय 22, श्लोक 19)

अर्थ– जो सैरन्धि (द्रौपदी) के लिए काँटा था। जिसने मेरे भाई की पत्नी का अपहरण करने की चेष्टा की थी। उस दुष्ट (कीचक) को मारकर मैं आज उऋण हो जाऊँगा और मुझे परम शान्ति मिलेगी।

यहाँ यह बात ध्यान देने की है कि यहाँ पर भीमसेन ने सैरन्धि (द्रौपदी) को अपनी पत्नी नहीं कहा, वरन् अपने भाई की पत्नी कहा है।

इस प्रमाण से भी यही सिद्ध होता है कि द्रौपदी का पति युधिष्ठिर था, अन्य कोई नहीं।

8. अपनी पत्नी को दाव पर लगाना–

महाभारत में युधिष्ठिर ने द्रौपदी को दाव पर लगा दिया था। यदि द्रौपदी अर्जुन अथवा पाँचों पाण्डवों की पत्नी थी, तो युधिष्ठिर ने उसे जुए में दाव पर कैसे लगा दिया? अन्य चारों भाइयों की अनुमति के बिना, युधिष्ठिर को यह अधिकार ही नहीं था कि वह द्रौपदी को जुए में दाव पर लगा सके। युधिष्ठिर केवल अपनी पत्नी को ही दाव पर लगा सकता था, अन्य या अन्यों की पत्नी को नहीं।

इस प्रमाण से भी यही सिद्ध होता है कि द्रौपदी का पतिकेवल युधिष्ठिर ही था।

9.जुए के समय पाँचो पाण्डवों की पत्नियाँ–जिस समय युधिष्ठिर ने जुआ खेला था, उस समय पाँचों पाण्डवों की पत्नियाँ भी विद्यमान थीं, जो इस प्रकार हैं–

1.युधिष्ठिर की पत्नी =द्रौपदी, देविका, 2. भीमसेन की पत्नी=बलन्धरा, 3.अर्जुन की पत्नी=सुभद्रा, 4.नकुल की पत्नी=करणुमती और सहदेव की पत्नी =विजया। (महाभारत, आदि पर्व, अध्याय 95, श्लोक 16–89)

जब पाँचों पाण्डवों की अपनी–अपनी पत्नियाँ विद्यमान थी, तब द्रौपदी को पाँचों पाण्डवों की पत्नी कैसे माना जा सकता है? इस प्रमाण से यह सिद्ध होता है कि युधिष्ठिर ने केवल अपनी ही पत्नी को जुए के दाव पर लगाया था।

10. श्री कृष्ण की उपस्थिति–

द्रौपदी के स्वयंवर और विवाह संस्कार के समय धर्मात्मा, वेद–मर्यादा के रक्षक, वेदों के विद्वान्, सच्चे ईश्वरभक्त, महान योद्धा और योगीराज श्री कृष्ण महाराज उपस्थित थे।एक राजकन्या को पाँच भाइयों की पत्नी बना देना पूर्णतः वेद–विरुद्ध, सनातन वैदिक परम्परा–विरुद्ध, एक नारी पर घोर अत्याचार और अधर्म है।

धर्म–रक्षक श्री कृष्ण महाराज इस महापाप को कभी होने नहीं दे सकते थे। इस प्रकार श्री कृष्ण के सामने द्रौपदी का विवाह पाँचों पाण्डवों से नहीं हो सकता था और हुआ भी नहीं। श्री कृष्ण के समक्ष ही द्रौपदी का विवाह युधिष्ठिर से ही हुआ था।

11. राजा द्रुपद का गौरव–

पाञ्चाल देश का राजा द्रुपद एक महाबलशाली और महान् गौरवशाली राजा था। ऐसा बलशाली राजा अपनी कन्या का विवाह पाँच भाइयों के साथ कभी नहीं कर सकता। एक सामान्य बुद्धि वाला मनुष्य भी इस बात को समझ सकता है। किन्तु पता नहीं शिक्षित लोगों की समझ में यह छोटी–सी बात भी क्यों नहीं आती?

12.असत्य एवं प्रक्षिप्त प्रकरण–

जो सज्जन द्रौपदी के पाँच पति मानते हैं, वे महाभारत के आदि पर्व तक का प्रकरण ध्यानपूर्वक पढ़कर देखें, उन्हें सत्यासत्य का दर्शन हो जाएगा।

एकचक्रा नगरी में एक ब्राह्मण से द्रौपदी के स्वयंवर का समाचार सुनकर जब पाँचों पाण्डव स्वयंवर में जाने के लिए व्याकुल हो गए थे, तब उनकी माता कुन्ती ने स्वयं ही स्वयंवर में जाने का प्रस्ताव रखा था। मार्ग में व्यास जी ने उन्हें पाञ्चाल नगर में जाने की सम्मति दी थी। स्वयं माता कुन्ती को यह भली भाँति पता था कि मेरे पुत्र स्वयवर में गए हैं, कहीं भिक्षा माँगने के लिए नहीं गए हैं। स्वयंवर में अर्जुन द्वारा लक्ष्यवेध के पश्चात् युधिष्ठिर नकुल और सहदेव माता कुन्ती को तत्काल ही सूचना देने के लिए माता के पास घर पर आ गए थे।

एक साधारण बुद्धि का मनुष्य भी यह स्वीकार करेगा कि युधिष्ठिर ने अपनी माता के समीप पहुँचकर स्वयंवर में विजय प्राप्त करने का सुखद समाचार अवश्य सुनाया होगा। इसके साथ ही माता कुन्ती ने भी स्वयंवर का समाचार अवश्य पूछा होगा। उत्तर में उसके पुत्रों ने भी अपनी माता को स्वयंवर में अर्जुन द्वारा लक्ष्यवेध का समाचार अवश्य सुनाया होगा।

इन प्रसंगों पर न्यायपूर्वक विचार करने से यह सिद्ध हो जाता है पाँचों पाण्डवों ने माता कुन्ती से यह नहीं कहा था कि 'हम भिक्षा लाए हैं' तथा कुन्ती ने भी यह नहीं कहा था कि 'पाँचों बाँटकर खा लो।'

इसके साथ ही राजा द्रुपद द्वारा द्रौपदी को विवाह से पूर्व ही अर्जुन और भीम के साथ कुम्हार के घर भेज देने का प्रकरण भी पूर्णतः असंगत, असत्य और प्रक्षिप्त है।

सत्य यह है कि अर्जुन द्वारा लक्ष्यवेध के पश्चात् युधिष्ठिर नकुल और सहदेव के साथ स्वयंवर विजय का सुखद समाचार देने के लिए ही माता कुन्ती के पास चले गए थे, किन्तु अर्जुन और भीम द्रौपदी के साथ राजा द्रुपद के राजभवन में ही रुक गए थे। द्रौपदी को पाँचों पाण्डवों की पत्नी बनाने का यह प्रकरण महाभारत में बाद में मिलाया गया है, जो पूर्णतः कपोल–कल्पित है।

उपर्युक्त सभी प्रमाणों एवं तर्कों से यह सिद्ध हो जाता है कि कृष्णा (द्रौपदी) का विधिवत विवाह केवल युधिष्ठिर से ही हुआ था और युधिष्ठिर ही द्रौपदी का पति था, अन्य कोई नहीं।

शेष अगले अंक में....

पृष्ठ 07 का शेष

सर्व सिद्धिदायक वैदिक...

य:=घी मे लोकलोकांतर के प्रदूषण रूपी असुर तत्त्व को नष्ट करने के तत्त्व हैं। गाय के दूध से बने घी में जलने के बाद भयंकर विष की प्रतिरोधक भेदक शक्ति बनती है, जिससे वातावरण के जल और वायु में मिले हुए विषैले पदार्थों का पृथक्करण होता है। डी.डी.टी. फिनाइल या रोग निवारक टीके, दवाइयो से अधिक जल्दी और कारगर उपाय यज्ञ करता है। यज्ञ की हवि मे शक्कर के उपयोग से जो धुआँ श्वास द्वारा शरीर में जाता है वह कैंसर को दूर करता है। धुएँ के साथ श्वास शरीर में सीधे प्राणवायु से मिलकर रक्त में मिलती है अतः इंजेक्शन से भी जल्दी असर करती है। अन्य दवाओं में सीमित स्थान और सीमित व्यक्तियों को ही बचाने की क्षमता है पर यज्ञ की वायु तो सर्वत्र पहुँचती है। यह यज्ञ करने वालों को ही नहीं सभी प्राणियों, पशु–पक्षियों एवं वृक्ष–वनस्पतियों के आरोग्य की भी रक्षा करती है। जब घी और सामग्री का धुआँ ऊपर उठता है तब उसकी गति सर्पाकार होती है अतः अधिक से अधिक वायु में घर्षण होकर शुद्धिकरण की क्रिया दुगुनी हो जाती है। प्रकृति द्वारा प्राप्त पृथ्वी, जल और वायु का जो आवरण है जिसे 'पर्यावरण' कहा जाता है। उसके प्रदूषण को दूर करती है।

'यज्ञ' वैदिक संस्कृति का आधार स्तभ है, इसलिए वैदिक संस्कृति यज्ञ सस्कृति बन गई है। हमारे प्रत्येक शुभ कार्य यज्ञ से प्रारभ किए जाते हैं। वेद–वाणी पुकार–पुकार कर कह रही है कि हे मानव! यदि तू परमात्मा से मिलना चाहता है तो इक्कीस यज्ञों का अनुष्ठान कर। 'पंच महायज्ञ' और 'सोलह संस्कार' जिसमें प्रत्येक कार्य यज्ञानुष्ठान से ओत–प्रोत है। 'जन्म' से लेकर मृत्यु तक ये संस्कार किए जाते हैं। पंच महायज्ञ हैं तो छोटे किन्तु इन्हें 'महायज्ञ' कहा गया है। ये यज्ञ प्रतिदिन करने चाहिए इनसे आत्मा का कल्याण होता है।

1) ब्रह्मयज्ञ–प्रातःकाल सूर्योदय से पहले सध्या करना अर्थात् सं+ध्यान=अच्छी तरह प्रभु का ध्यान करना। आत्मिक शक्ति और ज्ञानवृद्धि के लिए प्रभु भक्ति और स्वाध्याय करना।
2) देवयज्ञ – परस्पर सहयोग का तत्त्व सीखने के लिए, आध्यात्मिक शक्ति बढ़ाने के लिए हवन यज्ञ करना।
3) पितृयज्ञ–माता–पिता गुरूजनों की सेवा–सुश्रूषा करना।
4) अतिथि यज्ञ – जिनकी तिथि निश्चित नहीं होती ऐसे अतिथि विद्वान जन जो घर आते हैं, उनका स्वागत सत्कार करना।
5) बलिवैश्वदेवयज्ञ – पशु–पक्षी जो हमारे आस–पास हैं उनके लिए अपने भोजन में से कुछ ग्रास निकालकर उन्हें देना।

ये पंचमहायज्ञ आवश्यक नित्यकर्म हैं।

'महायज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः'– यज्ञ आत्मकल्याण और विश्वकल्याण का सर्वोपरि साधन है। धर्म में तीन स्कध हैं–त्रयो धर्मस्कधाः। 'यज्ञो दान तपश्चेति'–यज्ञ, दान और तप इसी आधारस्तभ पर सृष्टि टिकी हुई है। यज्ञ पितृऋण, देवऋण और ऋषिऋण से मुक्ति दिलाने वाला श्रेष्ठ कर्म है। यह यज्ञ ही वह कामधेनु है, जो प्राणि की संपूर्ण कामनाओं की पूर्ति करता है।'' यज्ञ जिस तरह इस लोक में शरीर तथा अतःकरण को स्वस्थ, शुद्ध और पवित्र बनाता है उसी तरह यह यज्ञ ब्रह्मलोक ले जाने वाला भी है। इसका वर्णन शतपथ ब्राह्मण में इस तरह है–राजा जनक ने यज्ञ के संबंध में ऋषि याज्ञवल्क्य से छः प्रश्न पूछे। तब ऋषि ने विस्तार से उत्तर देते हुए बताया कि होम की हुई आहुतियाँ जिस प्रकार एक सूक्ष्म रूप धारण करके आकाश में प्रवेश कर वायु तथा उसमें स्थित जल को शुद्ध पुष्ट तथा स्वच्छ करती हैं, फिर वह जल मेघ के रूप में नीचे उतरता है, जिससे औषधि, अन्न, वनस्पतियाँ, फल–फूलादि उत्पन्न होते हैं। उससे वीर्यप्राप्त होता है। इसी प्रकार होम की हुई आहुतियाँ अत्यंत सूक्ष्म रूप धारण कर यज्ञ करने वाले के अंतःकरण में प्रवेश करती हैं। श्रद्धा भक्ति से युक्त व्यक्ति के चरित्र पर उस कर्म के शुभ संस्कार पड़ते हैं। यही वह धर्म है जो मृत्यु के बाद संस्कार रूप में जाता है। इस प्रकार यज्ञ के दो रूप हो गए। एक जो सूक्ष्म रूप आकाश में प्रवेश करता है और दूसरा संस्कार रूप में अतःकरण में। आकाश सबका है, इसलिए आकाश में प्रविष्ट आहुतियाँ सबको समान फल देती हैं अर्थात् वृष्टि और पुष्टि का परंतु अंतःकरण सबका अलग–अलग है अतः इसमें प्रविष्ट आहुतियाँ, आहुति देने वाले का ही परलोक सुधारती हैं। यह जड़ चेतन संसार एक दूसरे के संगतिकरण और सहयोग से चल रहा है, इसकी शृंखला की एक भी कड़ी टूट नहीं सकती।

'अमृत मंथन' से साभार

शेष अगले अंक में....

पत्र/कविता

क्या भारतीयों को ईश्वर का परिचय विदेशियों से मिला?

ईश्वर का आश्रय परम हितकर है यजु 25/13 "ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है" यह स्मरण दिलाया पद दलित होते रहे हिन्दू कहे जाने वालों को उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने। महर्षि ने याद दिलाया कि परम करुणामय परमेश्वर हमारे हितार्थ सृष्टि का निर्माण ही नहीं करते वरन् सुखपूर्वक जीवनयापन करने हेतु अपेक्षित ज्ञान व आचार संहिता भी हमें वेद रूप में देते हैं जिनका पठन पाठन सर्वहितकरी है। महर्षि के इस उद्घोष से ब्रिटिश साम्राज्य ही नहीं, स्वदेश में निवासरत छुद्र स्वार्थों में लिप्त लोग भी कुपित हो गए और वेद प्रचार को बाधित करने में जुटे। अगर वेदो के पठन पाठन में हिन्दू ने रूचि ली जाती तो सर मुहम्मद इकबाल अपनी कविताएं नहीं लिख पाते और न ही बन पाता पाकिस्तान।

हिन्दुओं को ईश्वर और ईश्वरीय ज्ञान वेदों से विमुख करने में अहम् भूमिका रहती है दिखावटी वेदप्रशंसक पण्डे, पुजारी, पुरोहित, जोशी, ओझा, तान्त्रिक, अवतार, गुरु घण्टाल, साधु, सन्त, महन्त व मठाधीशों की, जो यही समझाते हैं कि होंगे सद्‌ग्रन्थ वेद, पर इनको पढ़ने के पचड़े में पड़ने की तुम्हें आवश्यकता नहीं है चूंकि हम अपने चमत्कार से तुम्हें कष्टमुक्त रखेंगे बशर्ते तुम चढ़ावा चढ़ाते रहो। अगर हिन्दू इनसे सम्मोहित न होकर ईश्वर से जुड़ता तो सर मुहम्मद इकबाल की कविताओं का ऐसा मुंहतोड़ उत्तर देता कि मुसलमानों का सुपीरियरिटी कम्प्लैक्स से लबरेज करके पाकिस्तान बनाने को तैयार कर पाना सम्भव नहीं होता बल्कि हमारे सद्ज्ञान व सच्चारित्र्य से प्रभावित होकर ईमान वाले ही इल्म की धारा में समा गए होते। हिन्दू कहे जाने वाले लोगों ने सर्वाधिक हानि उठाई है उन चिकनी चुपड़ी बातें करने वाले राजनेताओं पर भरोसा करके, जिन्हें शत्रुता है, न केवल वेद और वेद प्रचारक संस्था आर्य समाज से, आर्यावर्त से, वेद की भाषा और लिपि से वरन् उनका लक्ष्य वेद का नाम तक लेने वालों को नेस्तनाबूद करना है। यह हिन्दू को सर्वत्र अल्पसंख्यक बनाने के यत्न करते हैं। जिस प्रदेश में हिन्दू बहुसंख्यक हों वहां ये समझाते हैं कि ईमान वाले तुम्हारे छोटे भाई हैं इनकी जिद पूरी करना तुम्हारा फर्ज़ है। यह अगर कुरता मांगे तो कुरते के साथ टोपी भी दे दो लेकिन जब उसी प्रदेश में हिन्दू को अल्पसंख्यक बनाने में यह सफल हो जाते हैं तब राजनेता यह कहने लगते है कि इस क्षेत्र को जबरन भारत में शामिल किए रखना अनुचित है। इस क्षेत्र के निवासियों को प्रदेश के भू भाग सहित भारत से अलग होने के लिए आत्मनिर्णय का अधिकार मिलना चाहिए। ऐसे राजनेताओं ने भारत विभाजन की साम्रज्यवादियों व साम्प्रदायिकों की संयुक्त मुहिम का विरोध दिखावे भर के लिए किया अन्यथा इतना तो कह सकते थे कि इकबाल की कविता कुरान के भी प्रतिकूल है क्योंकि कुरान में पूर्ववर्तियों को अनीश्वरवादी नहीं कहा गया।

सर मुहम्मद इकबाल की कविता के समक्ष हिन्दू कहे जाने वाले लोगों के निरुत्तर रह जाने और महज डेढ़ दशक में बिना किसी विरोध के पाकिस्तान बन जाने से हमारे राजनेता शायर इकबाल की विद्वत्ता के कायल हो गए जिसके परिणामस्वरूप पाठ्य पुस्तकों में लिखा जाता है कि भारतवासियों को ईश्वर का परिचय विदेशियों से प्राप्त हुआ। यद्यपि आर्य समाज निरन्तर घोषित करता रहा कि ईश्वर ने अपना परिचय सृष्ट्यारम्भ में ही वेदों के द्वारा दे दिया और वेदों की शिक्षा भारतवर्ष से ही सर्वत्र प्रचारित-प्रसारित होती रही है लेकिन मुट्ठी भर आर्य समाजियों का स्वर नक्कारखाने में तूती की आवाज की तरह दबता रहा। कालान्तर में जनता को सूचना का अधिकार मिलने पर एन.सी.ई.आर. टी. द्वारा कक्षा 6 के लिए निर्धारित इतिहास की पाठ्य पुस्तक **'हमारे अतीत'** से सम्बन्धित इक्तीस बिन्दुओं पर सूचना प्राप्त करने के लिए, आर्य समाज का कार्यकर्ता होने के कारण, मैंने दिनांक 9.10.2009 से 20.10.2012 तक भरसक प्रयास किए पर केन्द्रीय सूचना आयोग ने भी सूचना दिलाने के बजाय टालमटोल ही बेहतर समझा। समय के फिर करवट बदलने पर त्यागी तपस्वी राष्ट्रभक्त योगी श्रीयुत नरेन्द्र मोदी के प्रधान मन्त्री बन जाने से पुनः प्रोत्साहित होकर मैने निम्नलिखित विनम्र याचनाएं करते हुए मानव संसाधन विकास मन्त्री जी को दस पत्र सम्बोधित किए हैं:-

अ-एन.सी.ई.आर.टी.से इक्तीस बिन्दुओं पर सूचनाएं दिला देवें।

ब-पाठ्य पुस्तकों में झूठ लिखा जाना बन्द कराकर सत्य लेखन सुनिश्चित करें।

स- मेरी पुस्तक पर अपनी बहुमूल्य सम्मति प्रदान करें।

उत्तर न मिलने पर मैंने माननीय प्रधान मन्त्री जी को भी तीन पत्र लिखे। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली से भी गुहार लगाई-आदरणीय स्वामी आर्यवेश जी ने मेरे मिशन से सहमति व्यक्त करते हुए अपने पत्र दिनांक 11-12-2015 द्वारा मुझे आश्वासन देने की कृपा की कि वे भी भारत सरकार को पत्र लिखेंगे। मुझे अहसास है कि राजनेताओं को जनमत के अनुरूप ही कार्य करना होता है इसीलिए कम से कम तीन वर्ष से फेसबुक पर रहकर वेदों के पठन पाठन के पक्ष में माहौल बनाने का यत्न कर रहा हूं पर यहां भी वेद विरोधी ऐसी लाबी सक्रिय है जिससे वेद पढ़ने का निवेदन करने पर न केवल मुझे नहीं वरन महर्षि दयानन्द सरस्वती के लिए भी गाली गलौज होने लगती है। यह सब फेसबुक पर लिखने की प्रेरणा मुझे स्व. इन्द्र वाचस्पति द्वारा लिखित पुस्तक "भारतीय स्वाधीनता संग्राम का इतिहास" पढ़ने से मिली है उसके पृष्ठांक 348 व 349 इस विषय में द्रष्टव्य हैं। अब तक अपने प्रयासों के विफल रहने के बावजूद मैं हताश नहीं हूं चूंकि जिन परमात्मा का दिया कर्तव्य निभा रहा हूं-वही सफलता दिलाएंगे।

सुबोध सागर जौहरी
ए-187, आवास विकास परिसर
बदायूं उत्तर प्रदेश -243601

भारत माँ की शान बढ़ाओ

भारत के नर-नारी जागो! वैदिक धर्म निभाओ भारत की शान बढ़ाओ।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, भारत की शान बढ़ाओ।।

किसी समय यह देश हमारा, दुनिया का था स्वामी।
विद्या बल में, रण कौशल में, या भगती में नामी।।

पढ़ो सभी इतिहास पुराना, व्यर्थ न समय गंवाओ,
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, भारत की शान बढ़ाओ।।

राम, भरत, लक्ष्मण जैसे थे, भारत में बलधारी।
गौतम, कपिल, कणाद, जैमिनी, थे वैदिक प्रचारी।।

योगीराज कृष्ण, अर्जुन की, जग को याद दिलाओ,
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, भारत की शान बढ़ाओ।।

सावित्री, सीता कुन्ती सी, थीं भारत में माता।
सती देवकी जीजाबाई, सी थीं भाग्यविधाता।।

याद करो पन्ना दाई को, जीवन सफल बनाओ,
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, भारत की शान बढ़ाओ।।

ऋषियों के प्यारे भारत में,गउएं जातीं मारी।
दिन पर दिन बढ़ते जाते हैं, जालिम अत्याचारी।।

बन जाओ प्रताप शिवा, दुष्टों को मार गिराओ,
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, भारत की शान बढ़ाओ।।

नेता बेईमान रात-दिन, करते हैं घोटले।
आस्तीन में छुप कर बैठे, नाग पोनिया काले।।

बिस्मिल शेखर बनो, पापियों के तुम शीश उड़ाओ,
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, भारत की शान बढ़ाओ।।

नित्य लूटते हैं अब गुण्डे, ललनाओं की अस्मत।
देश भक्त विद्वानों की, होती है यहां फजीहत।।

मानवता के हत्यारों को, भारी सजा दिलाओ,
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, भारत की शान बढ़ाओ।।

युवक-युवत्तियों को फैशन की, है घातक बीमारी।
मदिरा पीते नित्य अनाड़ी, जालिम मांसाहारी।।

अपना प्यारा देश बचाओ, भारत के योद्धाओ,
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, भारत की शान बढ़ाओ।।

उग्रवाद, आतंकवाद का, भारी जोर यहां है।
देश द्रोही गद्दारों का, भारी शोर यहां है।।

कर दो ठीक मिजाज खलों के वीरो! मत दहलाओ,
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, भारत की शान बढ़ाओ।।

भारत की प्यारी ललनाओ! अब तो निद्रा त्यागो।
दुर्गा लक्ष्मी बनो देवीयो! किरणमई बन जागो।।

'नन्दलाल निर्भय' दुनिया में, नाम अमर कर जाओ,
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, भारत की शान बढ़ाओ।।

पं. नन्दलाल निर्भय
आर्य सदन बहीन जनपद पलवल (हरियाणा)
चलभाष-09813845774

आइए इन ज्योतियों पर एक वैज्ञानिक दृष्टिपात करें

● ओम प्रकाश आर्य

ज्योति शब्द "द्युत दीप्तौ" धातु से सिद्ध होता है। द्युत=दयुत। द् का ज् और यु का ओकार करने पर 'ज्योति' शब्द बनता है। द्युत का अर्थ दीप्ति अर्थात् चमकना होता है। इस प्रकार 'ज्योति' का तात्पर्य हुआ जो चमकता है। यहाँ हम जिस ज्योति–चमकने वाले पदार्थ की चर्चा करेंगे, वे हैं आकाश में स्थित पदार्थ पिण्ड। वे दो प्रकार के हैं–एक पिंड वे हैं जो स्वतः चमकते हैं और दूसरे पिंड वे हैं जो दूसरे से प्रकाश प्राप्त करके चमकते हैं। उदाहरणार्थ सूर्य स्वतः प्रकाशित पिंड है और पृथिवी, बुध आदि पिंड सूर्य से प्रकाशित होते हैं। इनका ज्योति नाम इसलिए है क्योंकि ये स्वतः अथवा परतः प्रकाश से चमकते हैं। इस प्रकार आकाश में असंख्य स्वतः और परतः प्रकाशित पिंड हैं। उनको हम तारा, ग्रह, उपग्रह, धूमकेतु, नक्षत्र आदि नामों से जानते हैं। इन्हीं ज्योतियों के विषय में विस्तृत विवेचना करने वाले शास्त्र को ज्योतिष शास्त्र कहते हैं। अब यह स्पष्ट हो गया कि ज्योतिष ज्योतियों का ज्ञान प्रदान करने वाला शास्त्र है। इसका सम्बन्ध शुभ, अशुभ, मुहूर्त, क्रोध, प्रसन्नता, क्रूरता, नम्रता,उग्रता, भविष्यज्ञान आदि से कतई नहीं हो सकता। आज ज्योतिष को लेकर जितनी भ्रांतियाँ फैली हुई हैं उतनी अन्य किसी चीज पर नहीं। पढ़े–लिखे, अनपढ़, शहरी, ग्रामीण, महलवासी, झोंपड़ीवासी सब इस भ्रांति के शिकार देखे जाते हैं। आइए, हम इन ज्योतियों पर एक वैज्ञानिक दृष्टिपात करें, जिससे यह भ्रांति मिट सके और लोग अन्धविश्वास से दूर हो सकें। वेद कहता है–

अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।
अग्निर्वर्च्चो ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा सूर्यो वर्च्चो ज्यातिर्वर्च्चः स्वाहा।
ज्योतिः सूर्यः सूर्य्यो ज्योतिः स्वाहा।। यजु.3/9

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने 'ज्योति' शब्द के नाना अर्थ व्याख्यायित करते हुए लिखा है–"प्रकाशस्वरूप जगदीश्वर अच्छे प्रकार से हवन किए हुए पदार्थों को अपने रचे हुए पदार्थों में अपनी शक्ति से फैलाता है।"ऋषि के कथन पर विचार करें। परमात्मा हवन किए हुए पदार्थों को अपने रचे हुए पदार्थों में फैलाता है। परमात्मा के रचे हुए पदार्थ क्या हैं? वे हैं पृथिवी, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र आदि। हवन किया हुआ पदार्थ इनमें जाकर फैलता है। इससे ये पिंड शुद्ध होते हैं। इससे यह भाव ध्वनित हो रहा है कि पृथिवी पर किया गया हवन पृथिवी तक ही सीमित नहीं रहता वरन अन्य पिंडों तक पहुँचता है। इन्हीं पदार्थों में परमात्मा द्वारा रचित पदार्थ वृक्ष, वनस्पतियाँ, वायु, जल, आकाश आदि भी हैं। अवश्य ही हवन किया हुआ द्रव्य इनमें भी प्रसृत होता है। मुख्य रूप से ज्योतियों में पहुँचता है। उक्त मंत्र में बार–बार 'ज्योति' शब्द का ध्वनित होना ज्योति (पिंडों) की ओर इशारा है। थोड़ा इन खूबसूरत पिंडो (ज्योतियों) पर नजर दौड़ाएँ।

जिस ज्योति पर हम रहते हैं उसका नाम पृथिवी है । इसका व्यास 7926 मील है। इसकी परिधि 24902 मील बताई जाती है। यह सूर्य से 9,30,00,000 मील दूर है। ज्योतिर्विदों के अनुसार इसका भार 6,60,00,00,00,00,00,00,00,000 टन है। यह 18.5 मील प्रति सेकेंड की गति से सूर्य की परिक्रमा करती है। उसका यह वृत्ताकार मार्ग 58,37,25,765 मील का है। एक हजार प्रति घंटे की गति से यह 24 घंटे में अपनी प्रदक्षिणा पूर्ण करती है। 23,9000 मील दूर स्थित इसका एकमात्र उपग्रह चंद्रमा है। इसका व्यास 2160 मील है। वह अपनी प्रदक्षिणा करता हुआ पृथिवी की परिक्रमा करता है। सूर्य का व्यास 8,64,000 मील है। ज्योतिर्विदों के अनुसार इसका भार 200,00,00,00,00,00,00,00,00,00,00,00,0000 टन है। इस सूर्य के गर्भ में हमारी पृथिवी जैसी 13,00,000 पृथिवियाँ समा सकती हैं। यह अपनी प्रदक्षिणा 25 दिन में पूरी कर लेता है। यह हमारी आकाशगंगा के केन्द्र बिन्दु से 35000 प्रकाश वर्ष दूर है। उस आकाशगंगा का व्यास एक लाख प्रकाश वर्ष है। सूर्य अपने सौर परिवार के साथ इस आकाशगंगा में 240 किलोमीटर प्रति सेकेंड की गति से परिक्रमा कर रहा है। आकाश गंगा की एक परिक्रमा करने में उसे 25 करोड़ वर्ष लगते हैं। सूर्य से 1,30,00,00,00,00,000 मील की दूरी पर धूमकेतुओं की कक्षा है। इनकी संख्या 1,00,00,00,00,000 से अधिक होगी। ये भी सूर्य की परिक्रमा करते हैं। इनकी पूँछ लाखों मील लम्बी होती है। किसी किसी की तो 20 करोड़ मील रहती हैं।

सूर्य का सबसे निकट का ग्रह बुध है। इसका व्यास 2900 मील है। यह 88 दिन में सूर्य की परिक्रमा पूरी करता है। उसके बाद शुक्र ग्रह आता है। इसका व्यास 7610 मील है। यह 224.7 दिन में सूर्य की परिक्रमा पूरी करता है। पृथिवी 365.26 दिन में एक परिक्रमा करती है। मंगल ग्रह 687 दिन में एक परिक्रमा पूरी करता है। इसका व्यास 4221 मील है। इसके 2 उपग्रह हैं। मंगल ग्रह के आगे 1600 से अधिक ग्रहखंड हैं। इनका व्यास 10–10 मील 20–20 मील है। कुछ का सैकड़ों मील है, कुछ का 1–2 मील। बृहस्पति ग्रह 11.6 वर्ष में एक परिक्रमा पूरी करता है। इसके 16 उपग्रह हैं। इसका व्यास 26900 मील है। शनि ग्रह 29.5 वर्ष में सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करता है। इसका व्यास 71500 मील है। इसके 22 उपग्रह हैं। यूरेनस (अरुण) ग्रह 84 वर्ष में सूर्य की एक परिक्रमा करता है। इस प्रकार सभी का परिवार है। इसलिए इन्हें सौर–परिवार कहते हैं। वैदिक शब्दों में यह एक ब्रह्माण्ड कहलाता है। यह हुआ एक सूर्य के परिवार का थोड़ा सा वर्णन। ऐसे असंख्य सूर्य हैं। असंख्य आकाश गंगाएँ हैं। इनकी कल्पना नहीं की जा सकती।

ज्येष्ठा नामक नक्षत्र का व्यास हमारे सूर्य से 450 गुणा बड़ा है। इसका व्यास 3900 लाख मील है जबकि हमारे सूर्य का व्यास 8 लाख 64 हजार मील है। हमारे सूर्य जैसे नौ करोड़ सूर्य उसके गर्भ में समा सकते हैं। आप कल्पना नहीं कर सकते कि वह कितना बड़ा होगा। हमारी आकाशगंगा के पास एक दूसरी आकाशगंगा है। उसमें एसडोराडस नामक नक्षत्र है। उसको इन आँखों से नहीं देखा जा सकता। दूरवीक्ष यंत्र से ही उसे देखा जा सकता है। वह यहाँ से 102 प्रकाश वर्ष की दूरी पर है। उस नक्षत्र का व्यास हमारे सूर्य के व्यास से 1400 गुणा अधिक है। उसका व्यास 1 अरब 21 करोड़ मील है। यदि उसके सामने अपने सूर्य को रख दिया जाए तो वह कृष्ण पक्ष के तृतीया के चाँद जैसे दिखेगा। वैज्ञानिकों के अनुसार इससे भी बड़े–बड़े नक्षत्र हैं। इसी प्रकार उनके भी अपने–अपने सौर परिवार होंगे। उन सौर परिवारों को परमात्मा के अलावा और कौन जान सकता है? मानव की तो कल्पना भी वहाँ तक नहीं पहुँच सकती। इसी कल्पना को आयाम देने के लिए प्रकाश वर्ष कल्पित किया गया है। एक प्रकाश वर्ष में 60 खरब मील होते हैं। ग्रह–नक्षत्रों की दूरी इसी से मापी जाती है। हमारे सौर परिवार के निकट 4.17 प्रकाश वर्ष की दूरी पर एक अन्य सौर परिवार है। उससे कुछ दूरी पर व्याध नामक नक्षत्र है जिसकी दूरी 8.6 प्रकाश वर्ष है। हंसा नक्षत्र 10.9 प्रकाश वर्ष दूर है। श्रवण नक्षत्र 16.5 प्रकाश वर्ष दूर है। आर्द्रा नक्षत्र 650 प्रकाश वर्ष दूर है। ऐसे अगणित नक्षत्र हैं। एक खरब नक्षत्रों का समूह है जिसे हम अपनी आकाशगंगा कहते हैं। ऐसी न जाने कितनी आकाशगंगाएँ हैं जो मानव की कल्पना से परे है। ये सब ज्योतियाँ हैं। उनमें स्वतः एवं परतः प्रकाशमान दोनों प्रकार की ज्योतियाँ हैं। उनमें स्वतः एंव परतः प्रकाशमान दोनों प्रकार की ज्योतियाँ सम्मिलित हैं।

आकाशगंगाओं की कल्पना करके तो देखें। अपनी ही आकाशगंगा की कल्पना नहीं कर पाएँगे, फिर तो असंख्य आकाशगंगाओं की कल्पना करना मुश्किल है। एक आकाशगंगा से दूसरी आकाशगंगा के मध्य की दूरी 20 लाख प्रकाश वर्ष है। एक लाख प्रकाश वर्ष की दूरी में अपनी आकाशगंगा का विस्तार है। ऐसी कल्पना अन्य आकाशगंगाओं के बारे में कीजिए। परमपिता परमात्मा की शक्ति और उसका विस्तार अवर्णनीय है। ऐसी अकल्पनीय ज्योतियों का नमूना प्रस्तुत करता है ज्योतिष शास्त्र। विस्तृत जानकारी के लिए "ज्योतिष विवेक" नामक पुस्तक पढ़ें। प्रस्तुत लेख उसी पुस्तक पर आधारित है। उक्त पुस्तक प्राप्ति का पता है–आर्ष गुरुकुल, वड़लूरु, कामारेड्डी इन्दूरु, आन्ध्रप्रदेश (503111) अतएव ज्योति आकाशस्थ पिंड हैं।

आर्य समाज रावतभाटा
वाया कोटा (राजस्थान) 323307

पाठकों के लिए सूचना

महात्मा हंसराज विशेषांक छापे जाने के कारण अगले तीनों अंक संयुक्त रुप से 17 अप्रैल 2016 को प्रकाशित किए जाएंगे। पाठक कृपया नोट करें।

–सम्पादक

वार्षिक चुनाव

आर्य समाज ग्रेटर कैलाश पार्ट – II

प्रधान	श्री प्रियवत
उप प्रधान	श्री ओ. पी. भगत
	श्री एच डी अनेजा
मन्त्री	श्री अरुण खुल्लर
कोषाध्यक्ष	श्री आर.एन. सलूजा

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 30-31\03 \2016
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39\57

ऋषि जन्मोत्सव पर डी.ए.वी. सीनियर पब्लिक स्कूल, सूरजपुर (हरियाणा) की झांकी को मिला प्रथम पुरस्कार

केन्द्रीय आर्य सभा चण्डीगढ़ पंचकूला एंव मोहाली द्वारा महर्षि दयानन्द के 192 वें जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में चण्डीगढ़ में भव्य शोभा यात्रा का आयोजन किया गया। जिसमें चण्डीगढ़, पंचकूला एवं मोहाली की शिक्षण संस्थाओं, आर्य समाजों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। डी.ए.वी. सीनियर पब्लिक स्कूल, सूरजपुर (हरियाणा) ने माननीय डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री कमेटी के अध्यक्ष आर्यरत्न डा. पूनम सूरी जी के निर्देशन में 'नई दिशा नया संकल्प' के रूप में गंगा–सफाई पर एक झांकी प्रस्तुत की जिस की सभी दिग्गज लोगों ने सराहना की। इस झांकी को चण्डीगढ़, पंचकूला एवं मोहाली की सभी झांकियों में प्रथम स्थान प्राप्त हुआ। शोभा यात्रा में इस विद्यालय के विद्यार्थियों ने गंगा को

स्वच्छ रखने के नारों से वातावरण को गुंजायमान किया। प्रधानाचार्या महोदया डा. ममता गोयल ने कहा कि गंगा हमारे लिए बहता पानी नहीं है अपितु वह भारतीय संस्कृति की संवाहिका है, वह हमारे संस्कारों को जगाती है। आज समय की मांग है कि गंगा को सुरक्षित, स्वच्छ एवं निर्मल रखने के उपाय युद्धस्तर पर किए जाएं। केन्द्रीय आर्य सभा, चण्डीगढ़ द्वारा समापन समारोह में डी.ए.वी. सीनियर पब्लिक स्कूल, सूरजपुर (हरियाणा) की झांकी को प्रदत्त प्रथम पुरस्कार प्रधानाचार्या डा. ममता गोयल ने प्राप्त किया। इस झांकी को चेयरपर्सन श्रीमति स्नेह महाजन जी, रिजनल डायरेक्टर श्रीमति मधु बहल जी एवं मैनेजर श्री विजय कुमार जी के नेतृत्व में आकार दिया किया गया था।

आर. आर. बाबा. डी. ए. वी. कालेज फॉर गर्ल्ज बटाला में हुआ ऋषि बोधोत्सव का आयोजन

आर. आर. बाबा. डी. ए. वी. कॉलेज फॉर गर्ल्ज बटाला में स्वामी दयानन्द अध्ययन केन्द्र के तत्वावधान श्रीमती राज शर्मा को–आर्डीनेटर एवं प्रो. सुनील दत्त शर्मा को–आर्डीनेटर के नेतृत्व में प्रिंसीपल प्रो. डा. (श्रीमती) अजय सरीन के योग्य निर्देशन में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का बोध दिवस "ऋषि बोधोत्सव" का आयोजित किया गया। इस अवसर पर हवनयज्ञ का आयोजन कालेज की यज्ञशाला में किया गया। वैदिक मन्त्रोच्चारण द्वारा अग्नि देव में आहूति डालते हुए यज्ञ भगवान

से शुद्धताई, परोपकारिता, सत्यावलोकन की भावना प्रकट की गई जिससे समाज कल्याण में सकारात्मक भूमिका निभाई जा सके। इस अवसर पर छात्राओं द्वारा भजन प्रस्तुत किये गये।

प्रिंसीपल प्रो. डा. (श्रीमती) अजय सरीन ने छात्राओं को सम्बोधित करते हुए स्वामी दयानन्द जी को धन्यवाद दिया और कहा कि आज उनके प्रयत्न से ही नारी शिक्षा प्राप्त करके अपने अधिकारों के लिए जागरूक हुई है। स्वामी जी के जीवन के प्रेरणदायक प्रसंगों की चर्चा करते हुए उन्होंने छात्राओं तथा सभी सभासदों को स्वामी जी के दिखाये मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी।

श्रीमती राज शर्मा ने "ऋषि बोधोत्सव" के विषय में स्वामी दयानन्द जी के जीवन की "बोधरात्रि" प्रसंग सुनाते हुए "शिवरात्रि" को ऋषि बोधोत्सव क्यों कहा जाता है यह बताया। इस अवसर पर कालेज के प्राध्यापक वर्ग–कर्मचारी वर्ग सहित समूह छात्राओं ने भी भाग लिया।

डी.ए.वी पक्खोवाल रोड, लुधियाना ने ऋषि दयानन्द जी के 192वें जन्मोत्सव समारोह में लिया बढ़–चढ़कर भाग

लुधियाना जिला के समस्त समाजों द्वारा महर्षि दयानन्द जी के 192वें जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में दिनांक 3 मार्च 2016 को एक विशाल शोभायात्रा का आयोजन आर्य कॉलेज महिला विभाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, सिविल लाईन्ज में किया गया। इस शोभायात्रा में डी.ए.वी. पक्खोवाल रोड, लुधियाना के छात्रों व अध्यापकों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया। इस कार्यक्रम का प्रारम्भ स्वामी सम्पूर्णानन्द जी महाराज द्वारा गायत्री

महामन्त्र के साथ किया गया। यह विशाल शोभायात्रा आर्य कॉलेज महिला विभाग से प्रारम्भ होकर श्री दण्डी स्वामी मन्दिर, प्रिंस हॉस्टल, कॉलेज रोड़, फव्वार चौक, पुरानी कचहरी चौक से होकर आर्य कॉलेज महिला विभाग में सम्पन्न हुई।

शोभायात्रा के दौरान आर्य समाज, वेद एवं राष्ट्रहित सम्बन्धी नारे लगाए गए व भजन गाए गए। सभी उपस्थित जनों ने प्रण लिया कि वे ऋषि दयानन्द जी के आदर्श जीवन से प्रेरणा लेते हुए उनके विचारों को अपनाने का प्रयास करेंगे व आर्य समाज की उन्नति में अपना योगदान देंगे। प्रधानाचार्य डॉ. मोहन लाल शर्मा जी ने इस अवसर पर कहा कि, हमें महर्षि दयानन्द जी के बताए मार्ग पर चलते हुए उनके सपने को साकार करना चाहिएँ और सम्पूर्ण धरती को आर्य बनाना चाहिए।

निःशुल्क कृत्रिम अंग मेडीकल कैंप

शीला रानी तांगड़ी डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, बिलगा में भारत विकास परिषद चैरीटेबल ट्रस्ट पंजाब लुधियाना एवं सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, के सहयोग से विकलांग बंधुओं के लिए निःशुल्क कैंप लगवाया गया। इस कैंप के 23लोगों को हीयरिंगएड एवं तीन ट्राईसाईकल और दस व्यक्तियों को कृत्रिम अंग लगाये गये। इस अवसर पर भारत विकास परिषद के राज्य उप–प्रधान श्री राजिन्द्र ऋषि विशेष रूप से पधारे और इस कैंप की सफलता के लिए प्रि. रवि शर्मा सहित प्रधान, भारत विकास परिषद् बिलगा व उनकी टीम को बधाई दी। इस अवसर पर श्री भूपिन्द्र अजीत सिंह स्टेट कन्वीनर ग्रामीण शाखाएँ और श्री दविन्द्र बजाज भविष्य विस्तार को ओर्डीनेटर भी उपस्थित थे।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**